अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-39, अंक-01, 16-31 अगस्त, 2015

सर्वोदय का अभिप्राय

सुबह वाले को जितना, शाम वाले को भी उतना—यह बात सुनने में अटपटी भले ही लगे, कुछ लोग इस पर—'टके सेर भाजी, टके सेर खाजा'—की फबती कस सकते हैं; परन्तु इसमें मानवता का, समानता का, अद्वैत का वह तत्त्व समाया हुआ है, जिस पर 'सर्वोदय' का विशाल प्रासाद खड़ा है।

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य-अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक
वर्ष : 39, अंक : 01, 16-31 अगस्त, 2015

संपादक
बिमल कुमार
मो. : 9235772595

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह भवानी शंकर 'कुसुम'

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	पांच रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353

विज्ञापन दर

पूरा पृष्ठ	:	**2000 रुपये**
आधा पृष्ठ	:	**1000 रुपये**
चौथाई पृष्ठ	:	**500 रुपये**

इस अंक में...

1. संपादकीय : आंदोलन और व्यवस्था... 2
2. सर्वोदय का अभिप्राय... 3
3. बौद्धिक बेबसी... 6
4. वैश्विक स्वातंत्र्य द्वारा वैश्विक... 8
5. 'हिन्द स्वराज' और 'क्रेजी सभ्यता'... 10
6. भूमि अधिग्रहण का सच... 12
7. कोहनी का पाठ... 14
8. सादगी राजनेताओं की?... 15
9. प्रेरक व्यक्तित्व के धनी डॉ. एपीजे... 16
10. असली नमक : सेंधा नमक... 18
11. 46वां सर्वोदय समाज सम्मेलन... 19
12. कविताएं... 20

'सर्वोदय जगत' में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। उनके साथ सर्व सेवा संघ या संपादक मंडल का सहमत होना जरूरी नहीं है।

संपादकीय

आंदोलन और व्यवस्था

आंदोलनकारी शक्तियां जब किसी भी प्रकार की व्यवस्था के संचालन की ओर प्रवृत्त होती हैं, तो मूल उद्देश्यों, मूल्यों एवं सिद्धांतों से दूर होने लगती हैं। इसके मुख्यतः दो कारण हैं। एक तो यह कि आंदोलन व्यापक भागीदारी की प्रक्रिया होती है, इस कारण मूल्यों एवं उद्देश्यों के प्रति सजगता व्यापक स्तर पर बनी रहती है। व्यापक भागीदारी द्वारा लोकशक्ति एवं लोकसत्ता का भी प्रकटीकरण होता है। इस कारण सामान्य लोग भी मूल्यों एवं उद्देश्यों की ओर प्रवृत्त होने लगते हैं। समाज एक तुमुल मंथन के दौर से गुजरने लगता है। और इस तुमुल मंथन के कारण, लोक-स्तर से नया निर्माण भी शुरू होने लगता है। रचना एवं आंदोलन अन्योन्याश्रयी बन जाते हैं। इसके विपरीत व्यवस्था के संचालन में थोड़े लोगों की भागीदारी होती है। ये थोड़े से लोग, कितने भी प्रतिबद्ध क्यों न हों, व्यापक जन, सक्रिय भागीदारिता के अभाव में, उदासीन होते जाते हैं। कालान्तर में व्यवस्था का संचालन करने की जिम्मेदारी, सत्ता के रूप में उभरने लगती है। तब व्यवस्थापकों एवं कार्यकर्ताओं के बीच भी दूरी बढ़ती जाती है। ऐसे में मूल उद्देश्यों एवं मूल्यों की ओर प्रेरित करने वाली प्रवृत्ति कमजोर हो जाती है तथा व्यवस्था के संचालन की नीतियों के प्रति प्रवृत्ति बढ़ जाती है।

इसका एक बड़ा कारण यह है कि आंदोलनकारी संगठन भी शीर्ष केन्द्रमुखी श्रेणीबद्ध व्यवस्थाएं होती हैं। एक प्रकार से राजसत्ता की व्यवस्थाओं की दर्पण-प्रतिबिम्ब। इसी कारण आंदोलन के इतर, अपनी व्यवस्थाओं में ये संगठन राजसत्ता के चरित्र के समान ही व्यवहार करते हैं। आंदोलनकारी नेतृत्व की स्पर्धा में, राजसत्ता के इर्द-गिर्द होने वाली स्पर्धा के वायरस देखे जा सकते हैं।

अगर हम दुनिया में क्रांतियों का इतिहास देखें तो हम पायेंगे कि क्रांतिकारी आंदोलन राजसत्ता तक जाने में सफल तो हुए, लेकिन सत्ता में आने के बाद, उन उद्देश्यों एवं मूल्यों से दूर होते चले गये, जिनके लिए वे क्रांतियां हुई थीं। क्रांतिकारी आंदोलन के दौरान जो जन-शक्ति की ऊर्जा प्रकट हुई थी, उस सारी ऊर्जा को संगठन व नेतृत्व ने अपने में समाहित कर लिया। फलस्वरूप संगठन व नेतृत्व तो और मजबूत होकर सत्तासीन हुए, लेकिन आमजन उतना ही अधिक परिवर्तन की प्रक्रिया से विरत कर दिया गया।

गांधीजी ने क्रांति के तरीके में क्रांति का प्रयोग किया। उन्होंने चाहा कि आंदोलन से जो शक्ति प्रकट हो, वह लोकसत्ता के निर्माण में रूपांतरित हो। राजसत्ता में जाने के बजाय, आंदोलन का नेतृत्व लोकसत्ता के निर्माण में लगे। और, जहां-जहां लोकसत्ता का निर्माण होता जाये, वहां संगठन के सदस्य उस लोकसत्ता की नैतिक ऊर्जा के रूप में उसमें स्वयं को विलीन कर दें। अर्थात् लोकसत्ता का नैतिक प्रवाह भी बना रहे तथा बाह्य संगठन का आरोपण भी खत्म होता जाये।

सर्वोदय आंदोलन ने इसी प्रयोग में अपने को ढाला है। आने वाले समय अधिक चुनौतीपूर्ण हैं। आर्थिक साम्राज्यवाद के खिलाफ आंदोलन एवं वैकल्पिक रचना को तीव्र करने के लिए उन वैचारिक अवधारणाओं के कपटपूर्ण छद्म आवरण को भी बेनकाब करना होगा, जो लोगों में भ्रम फैलाने का काम कर रहे हैं। 'विकास', 'मेक इन इंडिया', 'विदेशी पूंजी की आवश्यकता' आदि कुछ ऐसे ही जुमले हैं। आंदोलन की ओर प्रवृत्त हुए बिना, यह सब नहीं हो पायेगा। बिमल कुमार

आमुख

सर्वोदय का अभिप्राय

सुबह वाले को जितना, शाम वाले को भी उतना—यह बात सुनने में अटपटी भले ही लगे, कुछ लोग इस पर—'टके सेर भाजी, टके सेर खाजा'—की फबती कस सकते हैं; परन्तु इसमें मानवता का, समानता का, अद्वैत का वह तत्त्व समाया हुआ है, जिस पर 'सर्वोदय' का विशाल प्रासाद खड़ा है।

''यह पुस्तक रास्ते में पढ़ने लायक है।''—कहते हुए जोहान्सबर्ग स्टेशन पर पोलक ने रस्किन की 'अनटू दिस लास्ट' पुस्तक गांधी के हाथ में रख दी।

और, इस पुस्तक ने जादू कर दिया गांधी पर! इसने उनके जीवन की धारा ही पलट दी। आत्मकथा में लिखा उन्होंने—''इसे हाथ में लेने के बाद मैं छोड़ ही न सका। इसने मुझे जकड़ लिया। ट्रेन शाम को डरबन पहुँची। सारी रात मुझे नींद नहीं आयी। पुस्तक में दिये गये आदर्शों के साँचे में अपने जीवन को ढालने का मैंने निश्चय कर लिया। जिस पुस्तक ने मुझ पर तत्काल असर डाला और मुझमें महत्त्वपूर्ण ठोस परिवर्तन किया, ऐसी तो यही एक पुस्तक है।

''मेरा विश्वास है कि मेरे हृदय के गहनतम प्रदेश में जो भावनाएँ छिपी पड़ी थीं, उनका स्पष्ट प्रतिबिम्ब मैंने रस्किन के इस ग्रन्थरत्न में देखा और इसीलिए उन्होंने मुझे अभिभूत कर जीवन परिवर्तित करने के लिए विवश कर दिया।

''रस्किन ने अपनी इस पुस्तक में मुख्यतः ये तीन बातें बतायी हैं :

1. व्यक्ति का श्रेय समष्टि के श्रेय में ही निहित है।
2. वकील का काम हो, चाहे नाई का, दोनों का मूल्य समान ही है। कारण, प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यवसाय द्वारा अपनी आजीविका चलाने का समान अधिकार है।
3. मजदूर, किसान अथवा कारीगर का जीवन ही सच्चा और सर्वोत्कृष्ट जीवन है।

''पहली बात मैं जानता था, दूसरी बात धुँधले रूप में मेरे सामने थी, पर तीसरी बात का तो मैंने विचार ही नहीं किया था। 'अनटू दिस लास्ट' पुस्तक ने सूर्य के प्रकाश की भाँति मेरे समक्ष यह बात स्पष्ट कर दी कि पहली बात में ही दूसरी और तीसरी बातें भी समायी हुई हैं।''

× × ×

हाँ तो, बाइबिल की एक कहानी के आधार पर है रस्किन की इस पुस्तक का नाम 'अनटू दिस लास्ट'। इसका अर्थ होता है—'इस अन्तवाले को भी!'

अंगूर के एक बगीचे के मालिक ने एक दिन सबेरे अपने यहाँ काम करने के लिए कुछ मजदूर रखे। मजदूरी तय हुई—एक पेनी रोज।

दोपहर को वह मजदूरों के अड्डे पर फिर गया। देखा, वहाँ उस समय कुछ मजदूर खड़े हैं—काम के अभाव में। उसने उन्हें भी अपने यहाँ काम पर लगा दिया।

तीसरे पहर और शाम को फिर उसे कुछ बेकार मजदूर दिखे। उन्हें भी उसने काम पर लगा दिया।

काम समाप्त होने पर उसने मुनीम से कहा कि ''मजदूरों को मजदूरी दे दो। जो लोग सबसे अन्त में आये हैं, उन्हीं से मजदूरी बाँटना शुरू करो।''

मुनीम ने हर मजदूर को एक-एक पेनी दे दी।

सबेरे से आनेवाले मजदूर सोच रहे थे कि शाम को आनेवालों को जब एक-एक पेनी मिल रही है, तो हमें उनसे ज्यादा मिलेगी ही; पर जब उन्हें भी एक ही पेनी मिली तो मालिक से उन्होंने शिकायत की कि ''यह क्या कि जिन लोगों ने सिर्फ एक घण्टे काम किया, उन्हें भी एक पेनी और हमें भी एक ही पेनी—जो दिनभर धूप में काम करते रहे!''

मालिक बोला : ''भाई मेरे, मैंने तुम्हारे प्रति कोई अन्याय तो किया नहीं। तुमने एक पेनी रोज पर काम करना मंजूर किया था ना? तब अपनी मजदूरी लो और घर जाओ। मेरी बात मुझ पर छोड़ो। मैं अंत वाले को भी उतनी ही मजदूरी दूँगा, जितनी तुम्हें। अपनी चीज अपनी इच्छा के अनुसार खर्च करने का मुझे अधिकार है न? किसी के प्रति मैं अच्छा व्यवहार करता हूँ, तो इसका तुम्हें दुःख क्यों हो रहा है?''

सुबह वाले को जितना, शाम वाले को भी उतना—यह बात सुनने में अटपटी भले ही लगे, कुछ लोग इस पर—'टके सेर भाजी टके सेर खाजा'—की फबती कस सकते हैं; परन्तु इसमें मानवता का, समानता का, अद्वैत का वह तत्त्व समाया हुआ है, जिस पर 'सर्वोदय' का विशाल प्रासाद खड़ा है।

'सर्वोदय' आखिर क्या है?—सबका उदय, सबका उत्कर्ष, सबका विकास ही तो सर्वोदय है। भारत का तो यह परम पुरातन आदर्श ठहरा :

सर्वेऽपि सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखमाप्नुयात्।।

ऋषियों की यह तपःपूत वाणी भिन्न-भिन्न रूपों में हमारे यहाँ मुखरित होती रही है। जैनाचार्य समंतभद्र कहते हैं :

'सर्वापदामन्तकरं निरन्तं सर्वोदयं तीर्थमिदं तवैव।'

पर सबका उदय, सबका कल्याण दाल-भात का कौर नहीं है। कुछ लोगों का उदय हो सकता है, बहुत लोगों का उदय हो सकता है, पर सब लोगों का भी उदय हो सकता है—यह बात लोगों के मस्तिष्क में धँसती ही नहीं! बड़े-बड़े विद्वान, बड़े-बड़े सिद्धान्तशास्त्री इस स्थान पर पहुँचकर अटक जाते हैं। कहते हैं : ''होना तो अवश्य ऐसा

चाहिए कि शत प्रतिशत का उदय हो, मानव-मात्र का कल्याण हो, हर व्यक्ति का विकास हो, पर यह व्यवहार्य नहीं है। सर्वोदय आदर्श हो सकता है, व्यवहार में उसका विनियोग सम्भव ही नहीं है।''

और यहीं पर सर्वोदयवादियों का अन्य सिद्धान्तवादियों से विरोध है।

सर्वोदय मानता है कि सबका उदय कोरा स्वप्न, कोरा आदर्श नहीं है, यह आदर्श व्यवहार्य है, यह अमल में लाया जा सकता है। सर्वोदय का आदर्श ऊँचा है, यह ठीक है, परन्तु न तो वह अप्राप्य है और न असाध्य है। वह प्रयत्नसाध्य है।

× × ×

सर्वोदय का आदर्श है—अद्वैत; और उसकी नीति है—समन्वय। मानवकृत विषमता का वह निराकरण करना चाहता है और प्राकृतिक विषमता को घटाना चाहता है।

सर्वोदय की दृष्टि से जीवन विज्ञान भी है, कला भी। जीवमात्र के लिए, प्राणिमात्र के लिए समादर, प्रत्येक के प्रति सहानुभूति ही सर्वोदय का मार्ग है। जीवमात्र के लिए सहानुभूति का यह अमृत जब जीवन में प्रवाहित होता है, तो सर्वोदय की लता में सुरभिपूर्ण सुमन खिल उठते हैं।

डार्विन मात्स्यन्याय (Survival of the fittest) की बात कहकर रुक गया। उसने प्रकृति का नियम बताया कि बड़ी मछली छोटी मछलियों को खाकर ही जीवित रहती है।

हक्सले एक कदम आगे बढ़ा। वह कहता है कि 'जिओ और जीने दो'—(Live and let live.)

पर इतने से ही काम चलनेवाला नहीं। सर्वोदय कहता है कि तुम दूसरों को जिलाने के लिए जिओ। तुम मुझे जिलाने के लिए जिओ, मैं तुम्हें जिलाने के लिए जिऊँ। तभी, और केवल तभी सबका जीवन सम्पन्न होगा, सबका उदय होगा, सर्वोदय होगा।

दूसरों को अपना बनाने के लिए प्रेम का विस्तार करना होगा, अहिंसा का विकास करना होगा और आज के सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन करना होगा। सर्वोदय जीवन के शाश्वत और व्यापक मूल्यों की स्थापना करना चाहता है और बाधक मूल्यों का निराकरण। यह कार्य न तो विधान द्वारा सम्भव है और न सत्ता द्वारा।

सर्वोदय ऐसे वर्ग-विहीन, जाति-विहीन और शोषण-विहीन समाज की स्थापना करना चाहता है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति और समूह को अपने सर्वाङ्गीण विकास के साधन के अवसर मिलेंगे। अहिंसा और सत्य द्वारा ही क्रान्ति सम्भव है। सर्वोदय इसीका प्रतिपादन करता है।

× × ×

आज तीन प्रकार की सत्ताएँ चल रही हैं—शस्त्र-सत्ता, धन-सत्ता और राज्य-सत्ता। परन्तु जागतिक स्थिति ऐसी हो गयी है कि इन तीनों सत्ताओं पर से लोगों का विश्वास उठता जा रहा है। आज सभी लोग किसी अन्य मानवीय शक्ति की खोज में हैं और वह मानवीय शक्ति सर्वोदय के माध्यम से ही विकसित हो सकती है।

सर्वोदय की पृष्ठभूमि आध्यात्मिक है। विज्ञान में ऐसी बात नहीं। विज्ञान अपने आविष्कारों से जनता को अनेक सुविधाएँ प्रदान कर सकता है। वह भौतिक सुखों की व्यवस्था कर सकता है; बटन दबाकर हवा दे सकता है, प्रकाश दे सकता है, रेडियो का संगीत सुना सकता है, पर उसमें यह क्षमता नहीं कि वह मानव का नैतिक स्तर ऊपर उठा दे। विज्ञान वेश्या-वृत्ति का निराकरण कर सकता है, उसके निराकरण के साधन प्रस्तुत कर सकता है, पर हर स्त्री को हर पुरुष की बहन बना देने की क्षमता उसमें नहीं। विज्ञान जीवन का बाहरी नक्शा बदल सकता है, पर भीतरी नक्शा बदलना उसके वश की बात नहीं।

× × ×

शस्त्र-सत्ता द्वारा, पुलिस के बैटन, फौज की बन्दूक, एटम बम और हाइड्रोजन बम द्वारा जनता को आतंकित किया जा सकता है, उसे निर्भय नहीं बनाया जा सकता। डंडे दिखाकर लोगों को जेल में डाला जा सकता है, उन्हें मुक्त नहीं किया जा सकता। शस्त्र-शक्ति द्वारा, हिंसा द्वारा हिंसा को दबाने की चेष्टा की जा सकती है, पर उससे अहिंसा की प्रतिष्ठा नहीं की जा सकती।

× × ×

चोरी करने पर सजा और जुर्माने की व्यवस्था कानून के द्वारा की जा सकती है, हत्या करने पर फाँसी का दण्ड दिया जा सकता है, पर कानून के द्वारा किसी को इस बात के लिए विवश नहीं किया जा सकता कि सामने भूखा व्यक्ति बैठा देखो, तो रन्तिदेव की तरह अपनी थाली उठाकर उसे दे दो और स्वयं भूखे रहने में प्रसन्नता का अनुभव करो।

× × ×

धन की सत्ता आज सारे विश्व में व्याप्त है। आज पैसे पर ईमान बिक रहा है, पैसे पर अस्मत लुट रही है, पैसे पर न्याय अपने नाम को हँसा रहा है। विश्व का कौन-सा अनर्थ है, जो आज पैसे के बल पर और पैसे के लिए नहीं किया जाता? अन्याय और शोषण, हिंसा और भ्रष्टाचार, चोरी और डकैती—सबकी जड़ में पैसा है।

कंचन की इस माया में पड़कर मनुष्य अपना कर्तव्य भूल गया है, अपना दायित्व भूल गया है, अपना लक्ष्य भूल गया है। पैसे के कारण श्रम की प्रतिष्ठा मानव-जीवन से जाती रही है। मनुष्य येन-केन प्रकारेण सोने की हवेली खड़ी करने को आकुल है। पर वह यह बात भूल गया है कि सोने की लंका भस्म होकर ही रहती है। रावण का गगनचुम्बी प्रासाद मिट्टी में ही मिलकर रहता है। अन्याय, शोषण, बेईमानी द्वारा इकट्ठी की गयी सम्पत्ति द्वारा भौतिक सुख भले ही बटोर लिये जायँ, उनसे आत्मिक सुख की उपलब्धि हो नहीं सकती। पैसा विश्व के अन्य सुख भले ही जुटा दे, परन्तु उससे आत्मा की प्रसन्नता प्राप्त नहीं की जा सकती। यही कारण है कि ईसा को कहना पड़ा कि 'सुई के छेद के भीतर से ऊँट का निकल जाना भले ही सम्भव हो, परन्तु पैसे वाले का स्वर्ग के राज्य में प्रवेश सम्भव नहीं!'

× × ×

राज्य-सत्ता पुलिस और सेना के सहारे—शस्त्र-सत्ता के सहारे जीती है, कानून की छत्रछाया में बढ़ती है, धन-सत्ता के भरोसे पलती-पनपती है और विज्ञान के जरिये विकसित होती है। परन्तु इतने साधनों से सज्जित रहने पर भी वह शत-प्रतिशत जनता को सुखी करने में अपने को असमर्थ पाती है। वह एक ओर अल्पसंख्यकों के प्रति अन्याय न होने देने का दावा करती है, दूसरी ओर बहुसंख्यकों के हितों की रक्षा का ढिंढोरा पीटती है। पर अल्पसंख्यक भी उसकी शिकायत करते हैं, बहुसंख्यक भी। कारण, उसका आदर्श रहता है—'अधिक-से-अधिक लोगों का अधिक-से-अधिक सुख।' उसने यह मान लिया है कि सबको तो हम अधिक सुख दे नहीं सकते, इसलिए अधिकतम लोगों को यदि हम अधिकतम सुख दे लें, तो हमारा कर्तव्य पूरा हो गया! हमारी आज की राजनीति इन्हीं आदर्शों पर पल रही है। पर इससे मानव-जाति का कल्याण सम्भव नहीं।

× × ×

सर्वोदय ऐसी राजनीति का कायल नहीं। वह लोकनीति का पक्षपाती है। राजनीति में जहाँ शासन मुख्य है, वहाँ लोकनीति में अनुशासन। राजनीति में जहाँ सत्ता मुख्य है, वहाँ लोकनीति में स्वतन्त्रता। राजनीति में जहाँ नियंत्रण मुख्य है, वहाँ लोकनीति में संयम। राजनीति में जहाँ सत्ता की स्पर्धा, अधिकारों की स्पर्धा मुख्य है, वहाँ लोकनीति में कर्तव्यों का आचरण। सर्वोदय का क्रम यही है कि हम शासन से अनुशासन की ओर, सत्ता से स्वतन्त्रता की ओर, नियंत्रण से संयम की ओर और अधिकारों की स्पर्धा से कर्तव्यों के आचरण की ओर बढ़ें।

× × ×

राज्यशास्त्र का प्रत्येक शास्त्री ऐसी आकांक्षा रखता है कि एक दिन ऐसा आये, जिस दिन राज्य की समाप्ति हो जाय। तब तक के लिए राज्य-संस्था एक अनिवार्य दोष (Necessary evil) है। पर इसका यह अर्थ नहीं कि राज्य-संस्था सदा अनिवार्य बनी ही रहेगी। यह राज्य-संस्था है ही इसलिए कि धीरे-धीरे वह ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दे, जब भय का निराकरण होते-होते यह स्थिति आ जाय कि शासन की आवश्यकता ही न रह जाय। आज नागरिकों में परस्पर विश्वास नहीं है, लोग एक-दूसरे से डरते हैं, तभी तो शासन की आवश्यकता पड़ती है। लोगों के मानस से यह डर निकल जाय, सब एक-दूसरे पर विश्वास करने लगें, तो शासन की आवश्यकता ही क्या रहेगी?

राज्य के पीछे जो सत्ता रहती है, वह लोगों की सत्ता, लोक-सत्ता होती है। पर हमने इस तथ्य को भुलाकर राजा को विष्णु मानकर उसके हाथ में 'अनियंत्रित राज्य-सत्ता' (Absolute Monarchy) सौंप दी। हाब्स ने इसका विस्तृत विवेचन किया है। लॉक इससे एक कदम आगे बढ़ा। उसने 'नियंत्रित राज्य-सत्ता' (Limited Monarchy) की बात कही। पर रूसो 'लोक-सत्ता' (Democracy) तक आ गया। यहीं से राज्य-सत्ता के निराकरण और लोक-सत्ता की स्थापना का श्रीगणेश होता है। राज्य-शास्त्र के इन तीन सिद्धान्तशास्त्रियों ने राज्यशास्त्र का विशेष रूप से विकास किया है।

× × ×

इनके बाद आया गरीबों का मसीहा मार्क्स। उसने गरीबों के लोकतन्त्र (Democracy for the poor) की बात कही। मार्क्स ने द्वंद्वात्मक भौतिकवाद (Dialectical Materialism), ऐतिहासिक भौतिकवाद और नियतिवाद (Materialistic interpretation of History) पर जोर दिया और एक वर्ग के संघटन के (Organization of one Class) की बात सिखायी। उसने क्रान्ति के लिए तीन बातों की आवश्यकता बतायी : 1. क्रान्ति वैज्ञानिक हो, 2. क्रान्ति अन्तर्राष्ट्रीय हो और 3. क्रान्ति में वर्ग-संघर्ष हो।

मार्क्स ने सारे मानवीय तत्त्वों का संग्रह किया, परन्तु उसका विज्ञान उसके भौतिकवाद के सिद्धान्तों के कारण पूँजीवाद की प्रतिक्रिया के रूप में प्रकट हुआ। अतः वह उस प्रतिक्रिया के साथ पूँजीवाद के स्वरूप को भी अंशतः लेकर आया।

मार्क्स के पहले किसी भी पीर-पैगम्बर या धर्म-प्रवर्तक ने यह नहीं कहा था कि गरीबी और अमीरी का निराकरण हो सकता है, होना चाहिए और होकर रहेगा। दान और गरीबों के प्रति सहानुभूति की बात तो सभी धर्मों में कही गयी, पर गरीबी और अमीरी के निराकरण की बात मार्क्स से पहले किसी ने नहीं कही। उसने स्पष्ट शब्दों में इस बात की घोषणा की कि 'अमीरी और गरीबी भगवान् की बनायी हुई नहीं है। किसी भी धर्म में उसका विधान नहीं है और यदि कोई धर्म इस भेद को मंजूर करता है, तो वह धर्म गरीब के लिए अफीम की गोली है।'

कार्ल मार्क्स ने इस बात पर जोर दिया कि हमें ऐसे समाज का निर्माण करना चाहिए, जिसमें न तो कोई गरीब रहेगा, न कोई अमीर। उसमें न तो दाता की गुंजाइश रहेगी, न भिखारी की। उसने पीड़ित मानवता को यह आशाभरा संदेश दिया कि जिस विकास-क्रम के अनुसार गरीबी और अमीरी आ गयी, उसी विकास-क्रम के अनुसार, सृष्टि के नियमों के अनुसार, ऐतिहासिक घटना-क्रम के अनुसार उनका निराकरण भी होनेवाला है और सो भी गरीबों के पुरुषार्थ से होनेवाला है।

गरीबी और अमीरी के निराकरण के लिए मार्क्स ने पुराने अर्थशास्त्रियों को Vulgar Economists (अशिष्ट अर्थशास्त्री) बताते हुए एक नया क्रान्तिकारी अर्थशास्त्र प्रस्तुत किया।

एडम स्मिथ और रिकार्डो का सिद्धान्त था—श्रम ही मूल्य है।

मिल और मार्शल ने सिद्धान्त बनाया—'जिसके विनियम में कुछ मिले, वह सम्पत्ति है (Wealth is anything that has an exchange value) रूसो और टॉल्स्टॉय ने इसका खूब मजाक उड़ाया। कहा : ''हवा के बदले में कुछ नहीं मिलता, तो हवा का कोई मूल्य नहीं!'' *...क्रमशः अगले अंक में*

ज्ञान-विज्ञान

बौद्धिक बेबसी

❑ शुभू पटवा

इस मायाजाल से ज्ञान को मुक्त कराने का एक ही अस्त्र हो सकता है कि हमारे हर एक मूल्यांकन का आधार नैतिकता हो। वैज्ञानिक अनुसंधानकर्ता हों या समाजशास्त्रीय-अर्थशास्त्रीय अध्ययन-कर्ता–उनके सामने जब तक नैतिकता, एक लक्ष्य नहीं होगा, तब तक उनकी निष्पत्तियां कभी भी सर्व सापेक्ष और जमीनी सचाई से जुड़ी नहीं होंगी।

हिरोशिमा-नागासाकी पर अणुबम विस्फोट से हुए प्रलय और लाखों बेगुनाहों की आर्त-चीत्कारों से आहत वैज्ञानिक ओपन हाइमर ने महसूस किया कि उसके हाथ इस समय निरीह निरपराधों के खून से सने हैं। सन् 1945 के 6 व 9 अगस्त को जापान में जो कुछ हुआ, उसकी कालिख यह सदी कभी धो नहीं सकेगी और न इसके जनक (ओपन हाइमर) को मुक्ति मिलेगी, जिसने तब रो-रो कर कहा था कि 'आज मेरे हाथों पर मुझे खून लगा दिखता है।' अणु बम के इस जनक ओपन हाइमर के साथ एक और वैज्ञानिक लियो जीलॉर्ड भी उन लोगों में थे, जो अपने अनुसंधान से उपजी वीभत्सता से आहत थे। इस वैज्ञानिक ने अपने अपराध-बोध के बोझ को कम करने के लिए अपने जीवन की दिशा ही बदल ली और जापान की घटना के बाद उसने अपनी वैज्ञानिक गतिविधियां बंद कर शेष जीवन को विश्व-कल्याण में खपा दिया।

अपनी बौद्धिक लाचारी को बताने के लिए यह एक उदाहरण पर्याप्त है। जिस सदी की तमाम उपलब्धियों पर इस समय समूचा विश्व इतरा रहा है, यह बात इसी सदी की है, जिसने ज्ञान की सत्ता को राज-सत्ता और धन-सत्ता के आगे भोथरा बना डाला था। ज्ञान और विज्ञान सदा सत्ता के श्रेयस्-रूप माने जाते रहे हैं, पर यह इसी सदी का प्रताप है कि वह बेबस है।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास के साथ यह जो स्थिति है, उसका बुनियादी कारण उसके अनैतिक होते जाने में है। यह विडंबना ही है कि विज्ञान के प्रति सर्वोच्च निष्ठा रखने वाले प्रो. सी. एफ. पावेल (ब्रिटेन) और प्रो. जुलियट क्यूरी (फ्रांस) जैसे नोबेल पुरस्कार विजेताओं ने आणविक परीक्षणों के दुष्प्रभावों पर जो कुछ कहा—उस पर न तब (छठे दशक में) ध्यान दिया गया और न उसके बाद। ठीक इसके विरुद्ध सरकारों की ओर से नियुक्त विशेषज्ञों ने इसके खतरों को सदा कम बताया और आमजन को छला। टेलीविजन जैसे सामान्य घरेलू उपकरण से भी कोई खतरा हो सकता है, हमारे विशेषज्ञों ने इस पर भी कोई बात गंभीरतापूर्वक नहीं बतायी। प्रजनन ग्रंथियों और शुक्राणुओं पर विकिरण का जो कुप्रभाव पड़ता है, उसके बारे में यह माना गया है कि चाहे कितना ही अल्प प्रभाव क्यों न हो, वह प्रजनन कोषों को विकृत करने के लिए पर्याप्त है और इसी कड़ी में यह भी बताया गया कि हर रोज दो घंटे टेलीविजन देखने से भी विकिरण की इतनी मात्रा तो पहुंच ही चुकी होती है।

विज्ञान की इन कथित उपलब्धियों के ऐसे दुष्प्रभावों से वह वर्ग भी अनभिज्ञ नहीं है जो जागरूक है, शिक्षित है। तब अशिक्षित और गाफिल वर्ग की तो बात ही क्या की जाए, जो संख्या में सर्वाधिक हैं और वही ऐसे दुष्प्रभावों का सर्वाधिक रूप से शिकार होते हैं। यहीं आकर प्रौद्योगिकी और विज्ञान और इसके अनुसंधानकर्ताओं पर सवालिया निशान लगता है कि आखिर उनकी निष्पत्तियां किसकी बेहतरी के लिए हैं?

इसी संदर्भ में सी. राजगोपालाचारी ने एक प्रसंग पर 18 मई, 1957 को 'स्वराज' में सही ही लिखा कि 'वर्तमान युग का बुद्धिवादी वर्ग जिस प्रकार नैतिकता के मूल्यांकन की समझदारी को खो बैठा है और यंत्र-विद्या का दास एवं शीतयुद्ध का शिकार बन चुका है, वह वस्तुतः सोचनीय है।'

बीती सदी के दौर में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के ऐसे अनैतिक आचरण के कई उद्धरण सामने रखे जा सकते हैं। आणविक परीक्षणों को लेकर तो जैसे वैज्ञानिकों के दो गुट ही बन गये थे। एक ओर वे नोबेल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिक थे, जो इन परीक्षणों को मानवता के लिए भयानक विनाशकारी बता रहे थे तो दूसरी ओर कुछ वैज्ञानिकों पर यह दबाव डाला जा रहा था कि वे कहें कि जो कुछ आणविक परीक्षणों के विरुद्ध कहा जा रहा है—वह बढ़ा-चढ़ा कर है और संदेहास्पद है।

यह सही है कि सत्य के अन्वेषण पर किसी भी तरह का प्रतिबंध नहीं लग सकता है और न ऐसा किया जाना वांछनीय ही हो सकता। पर, विज्ञान को सत्य के अन्वेषण का जरिया यदि हम मानते हैं तो उस पर राज्य-सत्ता का कुत्सित नियंत्रण कभी नहीं होना चाहिए। हम देखते हैं कि वर्तमान समय में न केवल राज्य का नियंत्रण ही है, राजनेता के क्षुद्र स्वार्थों के सामने इसके घुटने भी टिके

हुए हैं। यही अनैतिक स्थिति है जो एक बुराई के रूप में समाज को ग्रस रही है।

केवल राज-सत्ता ही नहीं, आज तो धन-सत्ता भी ज्ञान-विज्ञान की संस्थाओं पर हावी है। विश्व के अनेक विश्वविद्यालय धन और संसाधनों के अभाव में केवल सरकारों की तरफ ही नहीं, औद्योगिक प्रतिष्ठानों की ओर भी मोहताज हैं। एक वैज्ञानिक को अपने अनुसंधान के लिए जिस प्रयोगशाला की जरूरत होती है, उसके लिए संसाधन कहां से आएं? तब यदि कोई औद्योगिक प्रतिष्ठान या शासन उसे वह सब कुछ मुहैया कराता है तो निश्चय ही बदले में वह कुछ चाहता भी है और यहीं ज्ञान-विज्ञान कसौटी पर चढ़ जाता है कि उसकी निष्पत्तियां किसके लिए हों?

ज्ञान के अन्य क्षेत्रों में जैसे अर्थशास्त्र और समाजशास्त्र आदि के अध्ययनों को लेकर भी यही बात कही जा सकती है।

हम गरीबी का सवाल ही लें। इस सवाल पर अर्थशास्त्रियों के जो दृष्टिकोण सामने आते रहे हैं, वे कितने वास्तविक हैं और कितने बनावटी—सामान्यजन के लिए समझना कठिन हो जायेगा। आर्थिक उदारीकरण का सवाल आज सर्वाधिक चर्चा का मुद्दा है। उदारीकरण या आर्थिक सुधार किसके लिए? सबके लिए या वर्गविशेष के लिए। भारत का उदाहरण अपने सामने है। उदारीकरण और आर्थिक सुधारों के बावजूद गरीबी की रेखा के नीचे जीवन बसर करने वालों की संख्या में बढोत्तरी हुई है। ऐसा क्यों? अर्थशास्त्री मानते हैं कि इसका कारण क्रय क्षमता में कमी होना है। तब पूछा जाना चाहिए कि फिर आर्थिक सुधारों के क्या मानी रहे? एक तरफ भारतीय खाद्य निगम के भंडारों में खाद्यान्नों का भंडारण बढ़ा है और दूसरी ओर जनसंख्या (यानी खाने वाले) भी बढ़ी है। नोबेल पुरस्कार प्राप्त अमर्त्य सेन अकाल के कारणों का विश्लेषण करते हुए बताते हैं कि खाद्यान्नों की कमी के कारण अकाल नहीं, अकाल का कारण खाद्यान्नों को खरीदने की क्षमता का न रह जाना है। जैसा कि इस समय भारत में है। खाद्यान्न भंडार भरे हैं, पर लोग भूखे हैं। फिर भी आर्थिक सुधारों व उदारीकरण के औचित्य का परचम फहराने वाले अर्थशास्त्री अपना काम कर रहे हैं। तो क्या यह ज्ञान का मायाजाल है?

इस मायाजाल से ज्ञान को मुक्त कराने का एक ही अस्त्र हो सकता है कि हमारे हर एक मूल्यांकन का आधार नैतिकता हो। वैज्ञानिक अनुसंधानकर्ता हों या समाजशास्त्रीय-अर्थशास्त्रीय अध्ययनकर्ता—उनके सामने जब तक नैतिकता, एक लक्ष्य नहीं होगा तब तक उनकी निष्पत्तियां कभी भी सर्व सापेक्ष और जमीनी सचाई से जुड़ी नहीं होंगी।

आचार्यश्री महाप्रज्ञजी का कहना है कि नैतिकता की रक्षा करते हुए जो कुछ अर्जित होगा, वही तृप्ति और सुखानुभूति देने योग्य होगा। नैतिकता के सामूहिक विकास के लिए उनका मानना है कि उसकी विधियों पर अनुसंधान होना चाहिए और उसकी उपलब्धियों का जन-साधारण में प्रचार किया जाए और प्रशिक्षण दिया जाए। नैतिकता के बाधक और साधक तत्त्वों का भी वे खुलासा करते हैं और कहते हैं कि राष्ट्रीयता की तुलना में मानवता नैतिकता का अधिक सुदृढ़ आधार है। इस मान्यता का विकास होने पर अनैतिकता की सीमा अपने आप सिमट जाती है।

अनैतिकता के सिमटने में ही ज्ञान की बेबसी का उन्मूलन है। नये युग में प्रवेश करते हुए क्या इस दिशा में कुछ ठोस कदम उठ सकेंगे? *('समय, समाज और संस्कृति' से)*

सारा भारत एक है

हमारे पूर्वजों ने भारत में बेजोड़ संस्कृति की बुनियाद रखी है। इसके कारण दुनिया में इसका एक विशिष्ट स्थान है। हम एक ऐसी संस्कृति को विकसित करने का सपना देख रहे हैं, जिसमें जाति, धर्म, वर्ण, भाषा, सम्प्रदाय के नाम पर किसी प्रकार का विभाजन न हो। विविधता में एकता की भारत की विशेषता है। इस पर सभी नागरिकों को गर्व हो। जहां मानवता को फलने-फूलने का पर्याप्त अवसर हो। मानवता को कुंठित करने वाले प्रयासों के लिए यहां कोई स्थान नहीं है। यही भारत की असली सांस्कृतिक पहचान है।

पिछले कुछ वर्षों से हिंसा, आतंकवाद, सम्प्रदायवाद एवं कट्टरवाद का माहौल बनाकर कुछ मुट्ठीभर लोगों द्वारा देश के ताने-बाने को बिखेरने का प्रयास किया जा रहा है। कभी जाति के नाम पर, कभी धर्म के नाम पर तो कभी भाषा के नाम पर—क्या यह देश को अस्थिर करने का षड्यंत्र नहीं है? इस देश की जनता प्रबुद्ध है। हमारा मानना है कि वह इस तरह के कुप्रयासों का कभी साथ नहीं देगी तथा देश की एकता और अखंडता को मजबूत करने के लिए सदैव कार्यरत रहेगी।

असम के बोडो क्षेत्र में सन् 2012 में हुई हिंसा के बाद देशभर के गांधीजन शांति-स्थापना के लिए यहां पहुंचे और पिछले तीन सालों से इसके लिए लगातार प्रयास कर रहे हैं। हमने विभिन्न समुदायों के बीच शांति-सद्भावना कायम करने के लिए अनेक कदम उठाये हैं। हमारे इस प्रयास में क्षेत्र की आम जनता, विभिन्न समुदायों, संगठनों, स्थानीय प्रशासनों, शैक्षणिक प्रतिष्ठानों एवं गांवबुरा (मुखिया) का अभूतपूर्व सहयोग मिला है। हम उनके प्रति आभारी हैं।

सारा भारत एक है और एक रहेगा। महात्मा गांधी की शहादत हमें देश की अखंडता, शांति, सद्भावना एवं समन्वय का संदेश देती है। शांति-सैनिक बनकर इसकी रक्षा करना हम सबका पवित्र कर्तव्य है। **–चंदन पाल,** *मंत्री, सर्व सेवा संघ*

वैश्विक परिदृश्य

वैश्विक स्वातंत्र्य द्वारा वैश्विक मानववाद का रास्ता

❑ नानुभाई नायक

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद आयोजित लीग आफ नेशन्स की सभा ने कहा था कि यह युद्ध दुनिया का अंतिम युद्ध है। अब दूसरा विश्व युद्ध कभी नहीं होगा।

पहले विश्व युद्ध के बाद स्थापित 'लीग आफ नेशन्स' द्वारा किये गये प्रस्ताव में कहा गया था कि अब जगत में कहीं भी युद्ध नहीं होगा। युद्ध रोकने के लिए 'लीग आफ नेशन्स' के संविधान में संशोधन कर 'यूएनओ' (संयुक्त राष्ट्र अमेरिका) नामक नया संगठन बनाया गया, परंतु क्या 'यूएनओ' और क्या 'लीग आफ नेशन्स' दोनों जुड़वा भाई-बहन ही थे। 'लीग आफ नेशन्स' पूंजीवादी देशों की आज्ञाकारी दासी बनी रही, तो 'यूएनओ' भी केवल और केवल पूंजीवादी देशों का दास ही बना रहा है। अतः लोकतंत्र के नाम पर राष्ट्रवाद का झंडा लेकर सत्ता बनाये रखने वाले लोकतंत्रवादी राजाओं ने राष्ट्रवाद के नाम पर बीस वर्षों में ही विश्व को दूसरे विश्व युद्ध में झोंक दिया। पहले विश्व युद्ध से भी भयानक दूसरे विश्व युद्ध में करोड़ों सैनिक मारे गये। इतना ही नहीं, उससे भी बहुत ज्यादा निर्दोष लोग मारे गये। युद्धखोरों के हाथों मारे गये। इन करोड़ों लोगों की विधवाओं में से कई महिलाएं केवल और केवल अपने बच्चों के पालन-पोषण के वास्ते वेश्या बन कर पूरी दुनिया में फैल गयीं। इन महिलाओं की वेदना की न तो यूएनओ के कथित शांतिवादी लोकतंत्रवादियों ने परवाह की और न ही समाज का ठेका लेकर घूमने वाले सामाजिकों ने। युद्ध करके हमेशा 'यूएनओ' में बैठकर शांति की बात करने वाले दबंगों ने निर्णय करने का अधिकार अपने हाथ में रख कर 'लीग ऑफ नेशन्स' की जगह 'यूएनओ' नामक बनाये गये नये संगठन को भी 'यूएनओ' ने युद्ध टालने के लिए अधिक समझदारी पूर्वक काम करने का इरादा किया था। फिर भी तीसरे विश्व युद्ध की तैयारियां हो रही हैं। इसलिए जिस प्रकार संसदीय लोकतंत्र से स्वयं लोकतंत्र को ही मुक्त करने की जरूरत है, उसी प्रकार वैश्विक मानववाद की ओर मानव जाति को गति करनी होगी, तो 'यूएनओ' को भी उसके मौजूदा 'यूएनओ'पन से मुक्त करना होगा।

अब पक्षरहित लोकतंत्र की तरह विश्व मानव के सुख, संस्कार तथा स्वस्थ समूह जीवन के लिए नया 'विश्व मानव संगठन' बनाये बिना गांधीजी के वैश्विक मानववाद तक नहीं पहुंचा जा सकता। इसलिए मेरा मानना है कि यदि तीसरा विश्व युद्ध होगा—यदि हम नहीं चेतेंगे, तो ही होगा—तो वह इस जगत के लिए कदाचित अंतिम विश्व युद्ध होगा। तीसरे विश्व युद्ध में जगत के लगभग तमाम राष्ट्रों का जनजीवन छिन्न-भिन्न हो जायेगा और राष्ट्रों की सीमाएं मिट जायेंगी। तमाम राष्ट्रों का आधा जनजीवन राख का ढेर हो चुका होगा और यूएनओ का अस्तित्व भी समाप्त हो चुका होगा। जो कोई बचा होगा, उसे कुछ भी सोचने-समझने की सुध-बुध नहीं होगी। ऐसे गंभीर हालत पैदा हों और आधा विश्व नष्ट हो जाये, उससे पहले यूएनओ की जगह हम 'विश्व मानव संगठन' यानी 'वर्ल्ड पीपुल आर्गेनाइजेशन' बनायेंगे। 'यूएनओ' में जिस 'नेशन्स' (राष्ट्रों) का उल्लेख है, उसमें हम विश्वास नहीं रखते। बर्न्टाड रसेल ने सच ही कहा था कि राष्ट्रवाद जगत में युद्ध और विश्व युद्ध पैदा करके विश्व के विनाश का कारण बना है। अतः हम राष्ट्र को देश का स्वरूप देकर तमाम देशों के लोगों को एक करेंगे। 'वर्ल्ड पीपुल्स ऑर्गेनाइजेशन' नामक संस्थान किस तरह खड़ा हो सकेगा, इसमें कौन किस प्रकार गांधी विचार को लागू कर सकेगा, इस बारे में हमें सोचना होगा। गांधी विचार के जरिये किस प्रकार जगत को वैश्विक मानववाद के साथ जोड़ा जा सकेगा, उसके केवल बुनियादी सिद्धांत ऐसे हो सकते हैं।

इस 'विश्व मानव संगठन' का मुख्य उद्देश्य सबके साथ सुखी होने का होगा। यदि हम सब अंतर्द्वन्द्वों, युद्धों व विश्व युद्धों से बचना चाहते हैं, यदि हम दुनिया में शांतिपूर्ण मानव जीवन चाहते हैं, तो सुखी मानव समूहों को कमजोर मानव समूहों के साथ रखकर सुखी करना होगा।

अमुक प्रदेश कमजोर क्यों रहे? अशिक्षित, दरिद्र तथा कमजोर क्यों रहे? इस बारे में यदि हम शांतिपूर्वक सोचेंगे, तो समझ में आयेगा कि एक प्रदेश की मेहनत के बल पर ही दूसरा प्रदेश विकसित हुआ है। इसीलिए एक प्रदेश कमजोर रह गया है।

हाल ही में नेपाल के भूकंप से और भारत के मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार, असम, राजस्थान, छत्तीसगढ़ के भूकंप से हुए नुकसान की तस्वीरों के साथ दस-दस दिनों तक न्यूज चैनलों पर चर्चाएं हुईं। अखबारों के पन्ने कई दिनों तक इन समाचारों से सने रहे।

हम सत्य निष्कर्षित करने की क्षमता इस हद तक खो चुके हैं और इस हद तक संवेदनहीन हो गये हैं कि हम ऐसे दारूण प्रसंगों में भी पानी की ऊपरी सतह पर ही हाथ-पैर मार कर संतोष मान लेते हैं।

मैं रोज सुबह-शाम न्यूज चैनलों व अखबारों में खोजता था कि कहीं किसी विधायक का मकान गिरा है? कहीं किसी मुख्यमंत्री का मकान गिरा है? कहीं किसी मंत्री का मकान गिरा है? किसी वकील, डॉक्टर, जज, कलक्टर, किसी बड़े आदमी का मकान

गिरा है? नहीं, ऐसा तो किसी चैनल में नहीं दिखाई दिया। किसी अखबार में नहीं पढ़ा मैंने। सभी जगह मध्यम वर्ग और खास कर गरीबों के झुंड आंसू बहाते रास्ते पर बैठे दिखे। सभी जगह लाशों के ढेर के सामने खड़े होकर न्यूज चैनलों के ऐंकर दुःखी लोगों के मुंह के सामने माइक धरकर सवालों की झड़ी करते दिखे। इसमें किराये पर देने के लिए विशेष रूप से बनी बिल्डिंगों में रहने वाले विदेशी नौकरीपेशा लोग हों या वैसे ही आश्रय स्थानों में कुछ समय का किराया देकर रहने वाले विदेशी पर्यटक देखे गये, परंतु कहीं भी हाईफाई प्रकार का एक व्यक्ति या उसका परिवार हिचकियां भरता नहीं देखा मैंने। मुझे लगता है कि भगवान भी कैसा न्यायप्रिय और दयालु है? ऐसे ईमानदार लोगों को उसने कहीं भी बख्शा नहीं है। तमाम अपराधियों को ही सजा दी है। यदि ऐसे किराये के मकान के मलबे में तब्दील माल-सामान में दबे गरीब या जीवन निर्वाह के साधन खो देने वाले लोग भी उन सुखी लोगों की तरह ईमानदार होते, तो भगवान उन्हें भी पक्के आलिशान बंगले व मोटर गाड़ी नहीं देता? भगवान की कृपा होती, तो वे सरकार के दिए कच्चे मकान से भी कमजोर बिल्डिंगों में छोटे-से फ्लैट में रहने को थोड़े मजबूर होते? और उन व्हाइट कॉलर मध्यम वर्ग के नौकरीपेशा लोगों व पर्यटकों को भी व्यावसायिक बिल्डरों के बने कच्चे मकान जैसे तकलादी भवन में क्यों रहना पड़ता?

मेरे मेहरबान मित्रों! भूकंप प्राकृतिक आपदा है ही। उसके बारे में कोई भविष्यवाणी नहीं की जा सकती, यह भी सत्य है। इसमें लोग मरते ही हैं, मकान गिरते ही हैं, सब कुबूल, सब कुबूल, परंतु देश व नेपाल में जो भारी जान-हानि हुई, कराड़ों गरीब जीवन-निर्वाह से हाथ धो बैठे, उनमें से अस्सी से पचासी प्रतिशत लोग बच नहीं सकते थे? दोस्तों! इन 80-85 प्रतिशत हमारे ही भाइयों को हमारे ही पाप के कारण बे-मौत मरना पड़ा है। यह बात अगर हम नहीं स्वीकारेंगे, यदि 700 करोड़ में से 600 करोड़ विश्व मानवों के प्रति ऐसा ही व्यवहार बनाये रखेंगे, तो एक दिन हमारी दशा भी ऐसी नहीं होगी, ऐसा मत मानियेगा।

इसीलिए हम पूरे विश्व के लोगों को मिलकर 'विश्व मानव संगठन' स्थापित करने की जरूरत है। इस 'विश्व मानव संगठन' का मुख्य उद्देश्य सबके साथ विकसित होने का रहेगा। एक का सुख, दूसरे का भी सुख है और एक का दुःख, दूसरे का दुःख भी है। इस भावना से जियेंगे, तो दीर्घकाल हम दुनिया को 'देवभूमि' समान बना सकेंगे, निश्चित रूप से बना सकेंगे।

"हमें भाई-भाई की तरह सबको साथ मिलकर जीना सीखना होगा अथवा मूर्ख की तरह सबको साथ मरना होगा।" **–मार्टिन लूथर किंग**

इस 'विश्व मानव संगठन' के उद्देश्य सभी देश एकजुट होकर फाइनल करेंगे। इसमें कोई देश छोटा नहीं होगा, कोई देश बड़ा नहीं होगा। इसमें किसी देश को विशेष अतिरिक्त अधिकार भी नहीं होगा।

इसके उदेश्य व संविधान कुछ इस प्रकार के हो सकते हैं।

इसमें जुड़ने वाले देशों की एक कार्यकारिणी समिति बनेगी। कुल सदस्यों के करीब पन्द्रह प्रतिशत सदस्यों का चुनाव करना होगा। कुल देशों की आबादी व आर्थिक क्षमता के मानदंड पर दो श्रेणियां निर्धारित की जायेंगी। दोनों श्रेणियों में से समान सदस्य चिट्ठी उठाकर चुनने होंगे। एक बार चुने गये सदस्यों के नाम दूसरी बार के चुनाव में शामिल नहीं किये जायेंगे। इस प्रकार हर बार चुने गये सदस्य बाहर निकलते जायेंगे और एक चक्र पूरा होने के बाद के चुनाव पहले राउंड की तरह शुरू होंगे।

इस संगठन में दाखिल होने वाले देश को दाखिल होते वक्त एक प्रतिज्ञा पत्र हस्ताक्षर करके संगठन को देना होगा। यह प्रतिज्ञा पत्र कुछ ऐसा होगा।

'मैं....(देश का नाम) की लोक अदालत का सदस्य, हमारे देश की लोक अदालत द्वारा दिये गये अधिकारानुसार यह प्रतिज्ञा पत्र फाइल कर रहा हूं।

1. हमारा देश किसी भी छोटे या बड़े देश के विरुद्ध युद्ध नहीं करेगा अर्थात् किसी भी प्रकार के युद्ध में शामिल नहीं होगा। इतना ही नहीं, कोई छोटे-बड़े झगड़े भी नहीं करेगा। यदि ऐसी स्थिति आये, तो 'विश्व मानव संगठन' के जरिये ही उसका निपटारा किया जायेगा।

2. हमारा देश 'विश्व मानव संगठन' के प्रत्येक प्रस्ताव का पालन करेगा। यदि हमारा देश 'विश्व मानव संगठन' के खिलाफ जाकर कोई भी काम करेगा, तो 'विश्व मानव संगठन' हमारे देश के साथ किसी भी प्रकार के संबंध नहीं रखेगा। यह हमारे देश के लोग भलीभांति जानते हैं।

3. विश्व के छोटे-बड़े देशों में आज भारी आर्थिक, शैक्षिक, नैतिक, राजनीतिक, सामाजिक असंतुलन है। कहीं अत्यन्त गरीबी है, कहीं अत्यन्त अव्यवस्था है, कहीं मानव जीवन भारी अफरा-तफरी में फँसा हुआ है। गरीब, दलित, महिलाएं, बच्चे, बूढ़े, विकलांग सहित कदम-कदम पर प्रत्येक देश में मानव जीवन व वन्य जीवन छिन्न-भिन्न है। मानव जीवन में सर्वत्र व्याप्त दूषण दूर कर दुनिया भर के लोग ही नहीं, जलचर, पशु-पक्षी भी प्राकृतिक सुख भोगें, स्वास्थ्यप्रद आयुष्य भोगें और धीरे-धीरे विकास को प्राप्त हों, ऐसा जगत बनाने का 'विश्व मानव संगठन' का लक्ष्य है।

4. इस संगठन में कोई देश दाखिल नहीं हो, तो भी उसके साथ शत्रु समान व्यवहार नहीं किया जायेगा, परंतु ऐसे देश में भी गरीबों व वंचितों के खिलाफ कोई कदम उठाये जायेंगे तो उस स्थिति में 'विश्व मानव संगठन' उस देश में दखल देगा।

5. मौजूदा 'यूएनओ' के संविधान में उचित धाराएं पूरी अथवा सुधार-वृद्धि के साथ जोड़ी जायेंगी।

6. 'यूएनओ' द्वारा 1948 में पारित सिटिजन राइट्स चार्टर में दिये गये मुद्दों में कुछ और मुद्दे जोड़ कर उसे लागू भी किया जायेगा।

7. 'विश्व मानव संगठन' का संविधान बनाने के लिए ये आउटलाइन्स हैं, परंतु समग्र संविधान तो तमाम देशों की सभा ही सामूहिक रूप से चर्चा करके सुनियोजित ढंग से बनायेगी।'

यह तो 'विश्व मानव संगठन' की साधारण रूपरेखा दी गयी है, परंतु जब तक कम से कम पचास देश भारत के साथ पक्षरहित समाज व्यवस्था में नहीं जुड़ेंगे, तब तक ऐसा संगठन नहीं बनेगा। इस दौरान मौजूदा 'यूएनओ' में भारत सदस्य नहीं बनेगा। 'यूएनओ' के निर्णय यदि भारत के उद्देश्य के लिए हानिकारक नहीं हुए, तो भारत उन पर अमल करेगा।

इसके बावजूद यदि कोई भी देश भारत के साथ पक्षरहित समाज व्यवस्था के इस मॉडल में न जुड़े, तो भी भारत अकेला इस मॉडल को संपूर्ण बनाने के लिए निर्भय होकर आगे बढ़ेगा, बढ़ेगा और बढ़ेगा ही। ❑

उत्तर प्रदेश सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष मनोनीत

9 अगस्त 2015 को गायत्री शक्तिपीठ, चित्रकूट में उत्तर प्रदेश सर्वोदय मंडल का त्रैवार्षिक चुनाव सम्पन्न हुआ, जिसमें प्रदेश के तमाम सर्वोदय मित्र एवं लोकसेवकों ने प्रतिभाग किया। सर्व सेवा संघ, वर्धा से पर्यवेक्षक के रूप में श्री विजय कुमार उपस्थित रहे। चुनाव सर्वसम्मति से सम्पन्न हुआ। उत्तर प्रदेश सर्वोदय मंडल के पूर्व अध्यक्ष श्री रवीन्द्र सिंह चौहान ने श्री मधुसूदनजी के नाम का प्रस्ताव किया, जिसका समर्थन उपस्थित जनसमूह ने करतल ध्वनि से किया।

उल्लेखनीय है कि श्री मधुसूदनजी का यह दूसरा कार्यकाल है।

—शिवविजय सिंह

गतांक से आगे...

'हिन्द स्वराज' और 'क्रेजी सभ्यता'

❑ **डॉ. मनोज कुमार राय**

सिर्फ मुनाफे की दृष्टि से चलाये जा रहे इन व्यवसायों को 'हिन्द स्वराज' में खुली चुनौती दी गयी है। गांधी का सीधा सवाल है–''वे मजदूर से ज्यादा रोजी क्यों मांगते है? उनकी जरूरतें मजदूर से ज्यादा क्यों है? उन्होंने मजदूर से ज्यादा देश का क्या भला किया है? क्या भला करने वालों को ज्यादा पैसा लेने का हक है? और अगर पैसे की खातिर उन्होंने भला किया हो, तो उसे भला कैसे कहा जाय?''

आधुनिक सभ्यता के सन्दर्भ में ही गांधी ने...डॉक्टर, वकील आदि की भी बुराई की है। यहां हमें तनिक ठहरकर इसके पीछे के भाव को समझना होगा। केवल सतही ज्ञान से गांधी के साथ अन्याय ही होगा। 'हिन्द स्वराज' के कुछ प्रसंगों को देखें—''लोग दूसरों का दुःख दूर करने के लिए नहीं, बल्कि पैसा पैदा करने के लिए वकील बनते हैं। वह एक कमाई का रास्ता है।'' ''वकील का स्वार्थ झगड़ा बढ़ाने में है।''

''यूरोप के डॉक्टर तो हद करते हैं कि सिर्फ शरीर की ही गलत सँभाल के लिए लाखों को हर साल मारते हैं, जिन्दा जीवों पर प्रयोग करते हैं। ऐसा करना किसी भी धर्म को मंजूर नहीं।''

''हम डॉक्टर क्यों बनते हैं, यह भी सोचने की बात है। उसका सच्चा कारण तो आबरूदार और पैसा कमाने का धंधा करने की इच्छा है। उसमें परोपकार की बात ही नहीं है।''

''गांधी ने यह सब सन् 1990 में लिखा। अब लगभग एक सदी गुजरने को है। हमारी स्वयं की मुलाकात प्रायः रोज डॉक्टर और वकीलों से होती है। इनके नये-नये कारनामों की जानकारी अखबार और टी. वी. चैनलों से मिलती रहती है। कहना न होगा कि मात्र इन्हीं व्यवसायों में नहीं, अपितु अन्य व्यवसायों में भी बराबर की गिरावट आयी है। नीति को एक तरफ करके, सिर्फ मुनाफे की दृष्टि से चलाये जा रहे इन व्यवसायों को 'हिन्द स्वराज' में खुली चुनौती दी गयी है। गांधी का सीधा सवाल है—''वे मजदूर से ज्यादा रोजी क्यों मांगते है? उनकी जरूरतें मजदूर से ज्यादा क्यों है? उन्होंने मजदूर से ज्यादा देश का क्या भला किया है? क्या भला करने वालों को ज्यादा पैसा लेने का हक है? और अगर पैसे की खातिर उन्होंने भला किया हो, तो उसे भला कैसे कहा जाय?''

सर्वोदय के जो तीन मूल सिद्धान्त गांधी ने गिनाए हैं, उनमें से एक है—वकील और हजाम, दोनों के काम की कीमत एक सामन होनी चाहिए। क्योंकि आजीविका का हक दोनों को समान है—इसकी स्पष्ट झलक यहां है। दरअसल गांधी ने 'हिन्द स्वराज' में चालू व्यवस्था की जड़ पर ही प्रहार किया है।

कहते हैं, सच्चे प्रेम से सच्ची व्याकुलता उत्पन्न होती है। गांधी जब हिन्द स्वराज की प्रसव प्रक्रिया से गुजर रहे थे तो वे संपूर्ण अर्थ में व्याकुल थे समाज के अधःपतन को देखकर, वे व्याकुल थे मनुष्य जाति के विनाशकारी रास्तों को देखकर, वे व्याकुल थे मानव जाति द्वारा प्रकृति के साथ बीभत्स बलात्कार को देखकर। और हम जानते हैं कि जिसे सच्ची व्याकुलता है, वह विधि-निषेध के बंधन में नहीं बंधा रहता। उसे लोक-लाज और शास्त्र के प्रति निष्ठा भी अपने मार्ग से विचलित नहीं कर सकती। वह तो 'एकला चलो रे' का पथिक होता है। उसे न किसी के साथ की जरूरत होती है, न संगति की। वह तो अपनी साधना और अभ्यास के द्वारा ऐसी दृष्टि प्राप्त कर लेता है, जिससे आर-पार दिखाई देने लगता है। कबीर ने कहा है—

बिरहा बुरहा जिन कहौ, बिरहा है सुलतान।
जिस घटि बिरह न संचरै, सो घट सदा समान।

गांधी के मन में मनुष्य-प्रेम ने अकथनीय व्याकुलता पैदा कर दी थी। वे यह देख पा रहे थे कि पाश्चात्य सभ्यता दरअसल मनुष्य जाति के विनाश के लिए ही अवतरित हुई है। उनका व्याकुल मन कराह उठता है। वे 'हिन्द स्वराज' में कहते हैं—

''यह सभ्यता तो अधर्म है।'' पैगम्बर मुहम्मद साहब की सीख के मुताबिक ''यह शैतानी सभ्यता है।'' ''हिन्दू धर्म इसे निरा कलयुग कहता है।'' ''यह सभ्यता दूसरों का नाश करने वाली और खुद नाशवान है।''

गांधी को यह सभ्यता किसी कीमत पर स्वीकार नहीं है। 'हिन्द स्वराज' के पन्ने-पन्ने पर इस आसुरी सभ्यता के खिलाफ गांधी खड़े दिखायी देते हैं।

भारतीय गांव के प्रति गांधी के मन में अपार श्रद्धा है। गांव के रहन-सहन, शरीर-श्रम, आपसी सद्भाव और रिश्ते, मर्यादित जीवन, खेतों में अभय होकर रहना, सोना, प्रकृति के प्रति असीम प्यार आदि ने उनके मन को मोह लिया था। गांधी का इतिहास-बोध प्रखर था। वे अपने अध्ययन और विवेक से गांव के आंतरिक सौन्दर्य और उनके भोलेपन पर मुग्ध थे। उन्होंने देख लिया था कि तीव्र गति से बढ़ रहे इस सभ्यता के पांव भोले-भाले भारतीय गांव को पूरी तरह अपनी चपेट में ले लेंगे। आसन्न सर्वनाश की कल्पना से गांधी सिहर उठे। उनका कोमल हृदय चीत्कार उठा। वे कहते हैं—''जहां यह चांडाल सभ्यता नहीं पहुंची है, वहां हिन्दुस्तान आज भी वैसा ही है।'' अर्थात् भारतीय गांव अपने-अपने कामों में व्यस्त हैं। परंतु सतर्क न रहने पर इस आसुरी सभ्यता का आक्रमण उन पर भी हो सकता है। सन् 1909 में गांधी इसके प्रभाव के प्रारंभ को इंगित करते हैं, ''हिन्दुस्तानी सागर के किनारे ही मैल जमा है। उस मैल से जो गंदे हो गये हैं, उन्हें साफ होना है।''

आधुनिक सभ्यता को सुधार-शुमार करने वाले विचार को वे सिरे से खारिज कर देते हैं, ''यह सुधार नहीं, कुढ़धार है और इनसे यूरोप की प्रजा बर्बाद हो रही है।''

''सुधार एक तरह की बीमारी है।'' ''यह एक अदृश्य बीमारी है, उससे बचना।'' ''ये सुधार तो आम जनता को नीचे गिराने वाले हैं।''

''ये सुधार-कुधार क्यों है? इसे गांधी-चिन्तन के सूक्ष्म तत्त्वदर्शी कुबेरनाथ राय ने स्पष्ट कर दिया है—''आधुनिक मनुष्य भीतर-भीतर दरिद्र होता जा रहा है। क्योंकि बाहर-बाहर वह अत्यधिक अब नार्मल रूप में 'सक्रिय' है। विराम, क्षमा, शांति, ध्यान-सुख, दस मिनट अकेले बैठकर अंतर्मुखी होने का सुख, आत्मचिन्तन का सुख, एकांत सेवन का सुख, ये सब उसे फालतू लगते हैं और इन्हें ग्रहण करने की उसकी क्षमता का ही लोप होता जा रहा है। संक्षेप में वह एक तरह से ग्रस्त या बीमार है। उसके भीतर छः रिपु बैठे हैं और वे रिपु उसकी वात-प्रकृति से निरंतर व्यभिचार में लीन हैं। यह तो दो ही बातें समझता है। एक है उसका प्रकृति-विजेता होने का अहंकार और दूसरी है उसकी असीम रमण-तृषा। चाहे वह धरती हो, नारी हो, प्रकृति हो या पास-पड़ोस का समाज हो, जिसमें वह रहता है, सर्वत्र ही वह अलाउद्दीन खिलजी है। बलात्कार-मुखी होना ही उसकी आधुनिकता है, उक्त चारों सत्ताओं के संदर्भ में उसकी आंखों, उंगलियों और स्नायुमंडल के निरंतर चीता-बाघ घूमते रहते हैं।'' गांधी इसी कारण आधुनिक सभ्यता के प्रबल विरोधी हैं। लंदन गांधी के लिए दार्शनिकों, शिक्षाविदों और सभ्यता का गढ़ था। लंदन पहुंचने पर गांधी उसकी चकाचौंध पर मुग्ध थे, "When I first saw my room in Victoria Hotel, I thought I could pass a life time in that room 1 (83)." वे वहां के सुसज्जित युक्त भवनों, सड़क की दोनों तरफ की चमचमाती रोशनी (ध्यान रहे, बिजली का प्रसार हिन्दुस्तान में सीमित था), स्वेजनहर और जिब्राल्टर के खाका आदि पर मुग्ध थे। परंतु यह चमक-दमक ज्यादा दिन तक उन्हें नहीं बांध सकी। जल्दी ही वे लंदन के मायाजाल से मुक्त हुए, "This crazy civilization... London has gone mad over...We have trains running underground, there are telegraphs already hanging over us and outside on the roads, there is deafening noise of trains....Looking at this land, I at any rate have grown disillusioned with Western Civilization...it is beyond my understanding what good the discovery of the North Pole has done to the world...I for one regard all these tains as a symptom of mental derangement." जरा इसकी तुलना कीजिए पाश्चात्य विद्वान Vinson Brown के इस कथन से, जिसमें उन्होंने कहा है, "This civilization has put the whole earth in terrible danger by its over exploitation of living things, by its burning of fuels that pollute the air, by its poisoning of the waters, its exertion of erosion and deserts by its corruption of govt. and men. Are automobiles, airplanes, super highays and all the other fancy gadgets that have seemed so important to us, reality worth more...than a livable beautiful earth...?" 'हिन्द स्वराज' के द्वार पर पहुंचने से पूर्व गांधी की दिव्य दृष्टि से कुछ बच नहीं पाया था। वे यह देख पा रहे थे कि आने वाली पीढ़ी को आधुनिक सभ्यता की सबसे बड़ी देन 'शरीर की प्रतिष्ठा के लिए सर्वस्व का समर्पण' होगी। गांधी को यह पच ही नहीं रहा था, ''बड़े-बड़े नगर स्वतंत्रता के नहीं, दासता के सूचक हैं। यातायात के आधुनिक साधनों ने हमारे तीर्थों, पवित्र स्थानों को अपवित्र बना दिया है।...मैं तो यह हरगिज नहीं कह सकता कि हमें कभी भी यह सभ्यता (आधुनिक) अपनानी चाहिए।''

गांधी वस्तुतः उस नयी सभ्यता के खिलाफ थे, जो आत्मवंचना पर टिकी हुई है। वे पश्चिम और विकसित के नाम पर विश्व पर छा जाने की कामना रखने वाली उस सभ्यता और जीवन-पद्धति में बुनियादी परिवर्तन लाना चाहते थे, जो अबाध भोग, घोर हिंसा, आतंकवाद, क्रूरता, शोषण, रंगभेद, स्वार्थपरता आदि की भावना पर आश्रित थी। तमाम सुख-सुविधाओं की उपलब्धता के बावजूद आज मनुष्य अपने को जितना असहाय पाता है, उतना शायद ही उसने कभी अनुभव किया हो। गांधी इससे बेखबर नहीं थे। ❑

गतांक से आगे...

भूमि अधिग्रहण का सच

❑ मुकेश कुमार पाण्डेय /
अमित भूषण द्विवेदी

अब तक के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि किसानों से विभिन्न परियोजनाओं के लिए भूमि अधिग्रहण चाहे किसानों की सहमति से हो अथवा असहमति से, की प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष लागत बहुत ज्यादा है। भूमि अधिग्रहण के परिणाम-स्वरूप लोगों के जीवन निर्वाह के स्रोतों में कमी आती है। एक किसान जो उद्यमी की श्रेणी में शामिल होता है, मजदूर बनकर रह जाता है। प्रभावित लोगों के सामाजिक, आर्थिक संबंध तथा उनकी पूंजी दोनों ही प्रतिकूल रूप से प्रभावित होती है।

कुक तथा उनके साथियों ने इकॉनामिक एंड पोलिटिकल वीकली के अंक (17 अगस्त, 2013) में यह दिखाया है कि किस प्रकार विशेष आर्थिक क्षेत्र तथा अन्य औद्योगिक परियोजना के लिए भूमि अधिग्रहण के लिए ग्रामीणों को उनके गांव से उजाड़ दिया जाता है, उन्हें शहरीकरण के नाम पर सड़कों के किनारे बसा दिया जाता है, जहां खेती करने योग्य जमीन, लोगों के दैनिक जीवन की गतिविधियों तथा वहां के माहौल के बीच कोई अंतर-संबंध नहीं होता है। उनके गांव के जगह पर भारी प्रदूषण फैलाने वाली उद्योगों को स्थापित कर दिया जाता है।

इसके अलावा, सरकार की मंशा पर अन्य विद्वानों ने भी आपत्ति जताया है। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के प्रो. सी. पी. चन्द्रशेखर फ्रंटलाईन के 3 अप्रैल, 2015 के अंक में लिखते हैं कि सरकार का उद्देश्य, भारतीय अर्थव्यवस्था को दुनिया की सबसे तेज गति से उभरती हुई बाजार अर्थव्यवस्था बनाना है। सरकार ने इसके लिए बजट 2015-16 में विभिन्न आधारभूत संरचना वाले परियोजनाओं में व्यय को बढ़ा दिया है तथा सामाजिक सेवाओं पर व्यय के अनुपात को कम कर दिया है। उन्होंने संशोधित भूमि अधिग्रहण बिल को नव-उदारवादी एजेण्डा को पूरा करने का उपाय बताया है। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय की ही प्रो. जयती घोष भी फ्रंटलाईन के इसी अंक में बदले हुए भूमि अधिग्रहण पर सवाल उठाती हैं। उनका कहना है कि इस प्रकार का जबरन भूमि अधिग्रहण इस बात को सिद्ध करता है कि जब तक प्रति व्यक्ति आय के एक निश्चित वांछित लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर लिया जाता तब तक सरकार के लिए प्रकृति तथा लोगों का सम्मान करना गैर जरूरी है। इससे यह भी सिद्ध होता है कि सरकार के लिए किसान तथा खेती तुच्छता की श्रेणी में आते हैं।

इस कड़ी में सुप्रीम कोर्ट के एक निर्णय का जिक्र करना भी जरूरी है। भूमि अधिग्रहण के विवाद से संबंधित कुछ मामलों में जस्टिस जी. एस. सिंघवी तथा एस. जे. मुखोपाध्याय (2011) ने भूमि अधिग्रहण तथा किसानों की आत्महत्या पर कुछ इस प्रकार अपना निर्णय दिया था—

''गरीबों तथा असहाय के भूमि अधिग्रहण से न केवल वर्तमान पीढ़ी बल्कि आने वाली पीढ़ी भी प्रभावित होती है। यही कारण है कि जो किसान अपने भूमि स्वामित्व से वंचित किये जाते हैं, आत्महत्या करने तक मजबूर हो जाते हैं। किसी भी असहाय गरीब को उसके छोटे से घर से वंचित करना उसके सपने को तोड़ने के समान है। आधारभूत संरचना के विकास तथा औद्योगीकरण के नाम से इस प्रकार भूमि अधिग्रहण करना पूर्णतः अन्यायपूर्ण, मनमाना तथा तर्कहीन है। यदि भूमि अधिग्रहण अति आवश्यक हो जाये तो भी राज्य सत्ता को भूमि अधिग्रहण करते समय प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का दृढ़ता से पालन करना चाहिए।''

निष्कर्ष तथा नीतिगत सुझाव

अब तक के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि किसानों से विभिन्न परियोजनाओं के लिए भूमि अधिग्रहण चाहे किसानों की सहमति से हो अथवा असहमति से, की प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष लागत बहुत ज्यादा है। भूमि अधिग्रहण के परिणामस्वरूप लोगों के जीवन निर्वाह के स्रोतों में कमी आती है। एक किसान जो उद्यमी की श्रेणी में शामिल होता है, मजदूर बनकर रह जाता है। प्रभावित लोगों के सामाजिक, आर्थिक संबंध तथा उनकी पूंजी दोनों ही प्रतिकूल रूप से प्रभावित होती है। महिलाओं के कल्याण में कमी आती है तथा पर्यावरण एवं खाद्य सुरक्षा के समक्ष गम्भीर चुनौती उत्पन्न होती है। स्पष्ट है कि भूमि अधिग्रहण एक प्रकार के नीतिगत अंतर्विरोध को जन्म देता है। निःसंदेह भूमि अधिग्रहण आर्थिक विकास के लिए आवश्यक है, परन्तु जिस प्रकार कानून में बदलाव किया जा रहा है, वह सरकार की नीतिगत अदूरदर्शिता के साथ-साथ उसकी किसान एवं गरीब हितैषी होने की मंशा पर भी सवाल खड़े कर रहे हैं। पूर्व में आधारभूत संरचना विकास तथा विभिन्न उद्योगों के लिए जो भूमि अधिग्रहण किया गया है, उसका अनुभव

विस्थापितों के लिए अच्छा नहीं रहा है। वर्तमान राज्य सत्ता, अपने इस प्रकार के निर्णय से गरीब जनता के भरोसे को तोड़ने का ही काम कर रही है। सुशासन, सबका साथ—सबका विकास तथा अच्छे दिन के वायदे करने वाली राज्यसत्ता अलोकतांत्रिक, अपारदर्शी तथा जनविरोधी होने का प्रमाण प्रस्तुत कर रही है। यदि सरकार को वास्तव में देश के नागरिकों की चिन्ता है, तो उसे विशाल जनादेश का सम्मान करते हुए ऐसे उपाय करने चाहिए जो व्यक्तिगत हित तथा सामाजिक हित दोनों को एक साथ पूरा करते हैं। सर्वप्रथम किसानों की सहमति वाला उपबंध किसी भी कीमत पर नहीं हटाया जाना चाहिए। दूसरे, केन्द्र सरकार को राज्य सरकारों के सहयोग से पूरे देश में बेकार पड़ी भूमि की एक सूची तैयार करनी चाहिए। यदि कारपोरेट क्षेत्र उस जगह पर कार्य करने को तैयार है, तो ठीक है अन्यथा उसे अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। अल्पकाल में भले ही यह संवृद्धि को नुकसान पहुंचाए, परन्तु दीर्घकाल में इस प्रकार की नीति देश हित में होगा। साथ ही साथ, सरकार को सुविधाविहीन क्षेत्रों में आधारभूत संरचना के समुचित विकास पर ध्यान देना होगा, तभी निजी क्षेत्र देश में कहीं भी निवेश करने को आसानी से तैयार हो पायेंगे। यदि देश में समावेशी विकास को सुनिश्चित करना है, तो सरकार को निजी क्षेत्र को अपनी शर्तों पर काम करने को बाध्य करना होगा न कि उनकी शर्तों पर स्वयं तैयार हों। निश्चित तौर पर इस प्रकार के अध्यारोपण से उत्पादन लागतों में वृद्धि आती है परंतु सरकार उन अतिरिक्त लागतों की भरपाई करों में छूट तथा सब्सिडी के द्वारा कर सकती है।

इस संपूर्ण विश्लेषण का अभिप्राय यह है कि किसानों के साथ किसी भी कीमत पर अन्याय नहीं होना चाहिए। यदि सरकार बाजार के माध्यम से देश का विकास करना चाहती है तो प्रभावित किसानों की हानि तथा समस्या का समाधान भी बाजार के माध्यम से होना चाहिए। होना यह चाहिए कि जो किसान अपनी जमीन, घर तथा खेत से विस्थापित हो रहे हैं, उन्हें उन औद्योगिक ईकाइयों जिनके लिए उनसे भूमि अधिग्रहित की गयी है, में साझीदार (शेयर होल्डर) बनाना चाहिए ताकि वे उस उद्योग के लाभ के साथ जुड़े रहें तथा उन्हें उनके पूंजीगत निवेश (भूमि) के बदले प्रतिफल प्राप्त होता रहे। हो सकता है कि यह सुझाव नीति निर्धारकों को अव्यावहारिक तथा काल्पनिक लगे परंतु इससे नीचे का हल अन्यायपूर्ण ही कहलायेगा तथा गरीब किसान अपने को ठगा महसूस करेंगे। ❑

सर्वोदय विचार परीक्षा प्रमाण-पत्र व पुरस्कार वितरण

गांधीजी के बारे में लोगों को जानने की जिज्ञासा निरंतर बढ़ रही है कि गांधीजी कैसा जीवन जीते थे। गांधीजी की सबसे खास बात थी कि वे जैसा सोचते, वैसा ही करते थे। 'कथनी और करनी' में उन्होंने कभी भेद नहीं किया। गांधीजी ने विश्व शांति की स्थापना की बात की। वे सभी जातियों, वर्गों को समानता से देखते थे। ये विचार प्रो. धर्मचंद जैन ने गांधी शांति प्रतिष्ठान, जोधपुर में आयोजित 'सर्वोदय विचार परीक्षा' के प्रमाण-पत्र व पुरस्कार वितरण समारोह में बतौर मुख्य अतिथि व्यक्त किये। प्रो. जैन ने कहा कि युवा पीढ़ी अपनी कमजोरियों को पहचाने और उनके निराकरण का संकल्प करे। विश्व में हर व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं को सीमित करे, जिससे सभी की आवश्यकताएं पूरी की जा सकें। इसके लिए 'सादा जीवन, उच्च विचार' का संदेश ग्रहण करना चाहिए। कार्यक्रम में 36 परीक्षा केन्द्रों के विद्यार्थियों को मीरा संस्थान की संस्थापक छगन बहन की स्मृति में प्रवेश व परिचय परीक्षा में सर्वोच्च अंक प्राप्त करने पर सत्-साहित्य पुरस्कार स्वरूप प्रदान किये गये। राजस्थान राज्य गांधी स्मारक निधि जयपुर की ओर से राज्य स्तर पर वरीयता में प्रथम स्थान प्राप्त रमेश पटेल-प्रवेश, सप्तम स्थान प्राप्त सुश्री रेखा दैयया, परिचय परीक्षा में चतुर्थ स्थान श्याम पटेल, षष्टम स्थान प्राप्त अर्जुनदास वैष्णव को नकद पुरस्कार व सत्-साहित्य प्रदान किये गये।

समारोह की अध्यक्षता करते हुए आशा बोथरा ने कहा कि युवा पीढ़ी गांधीजी के विचारों को आत्मसात् करे, उनके एकादश व्रत का अनुसरण करे। डॉ. एस.एन. सुब्बराव का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि देश की दौलत, ताकत, इज्जत एवं शान नौजवान ही हैं। प्रारम्भ में डॉ. ओमप्रकाश टाक ने छगन बहन का जीवन परिचय देते हुए कहा कि उन्होंने जीवनभर सर्वोदय विचारों को आगे बढ़ाने का प्रयास किया। परीक्षा प्रभारी धर्मेश रूटिया ने जानकारी दी कि इस वर्ष और अधिक विद्यार्थियों को जोड़ने हेतु 50 केन्द्र स्थापित करने का लक्ष्य रखा गया है। पुरस्कार से सम्मानित रमेश पटेल एवं शालिनी सैनी ने अपने विचार व्यक्त करते हुए बताया कि गांधी के विचारों से युवा पीढ़ी को जोड़ना आवश्यक है। कार्यक्रम का संचालन एवं स्वागत डॉ. भावेन्द्र शरद जैन ने किया। कार्यक्रम में डॉ. पद्मजा शर्मा, नेमीचंद गहलोत, सुशील, डॉ. रश्मि राठी, डॉ. सुनील बिड़ला, करण सिंह परिहार, मनोहर सिंह चौहान, हरप्रसाद राय, संध्या शुक्ल, गजेन्द्र दवे, अनिता सिंह, कमलेश सहित आदि की उपस्थिति उल्लेखनीय रही। **–डॉ. भावेन्द्र शरद जैन**

धरोहर

कोहनी का पाठ

❑ अनुपम मिश्र

अंग्रेज जब यहां आये हैं तब हमारे यहां सिविल इंजीनियरिंग की पढ़ाई सिखाने वाला कोई भी कॉलेज नहीं था। कुछ दूसरे तरह के विषय सिखाने वाले कॉलेज भी नहीं थे। इंजीनियरिंग की पढ़ाई नहीं थी, इंजीनियर नहीं थे। लेकिन इंजीनियरिंग का काम सब जगह होता था।

क्या बिना पढ़े, बिना स्कूल गये कोई इंजीनियर बन सकता है? आज तो यही जवाब मिलेगा कि ऐसा नहीं हो सकता।

इंजीनियर बनना हो तो स्कूल जाना होगा। वहां भी सिर्फ अपनी मेहनत, अपनी योग्यता काम नहीं आयेगी। ट्यूशन तो पुराना पड़ गया शब्द है, उससे काम नहीं चलेगा। सब तो यही बतायेंगे कि इंजीनियर बनाना है तो कोचिंग का इंतजाम भी करना पड़ेगा। इस सब में जो खर्च आयेगा, वह भी हर घर तो जुटा नहीं पाता। तो कुछ बच्चे चाह कर भी, योग्य होते हुए भी इस दौड़ में पीछे रह जाते हैं।

जो इस मोड़ से आगे बढ़ गये, उन्हें अभी पांच साल और बिताने हैं। तब वे इंजीनियर बन पायेंगे। तो जरा जोड़कर तो देखो भला कितने साल हो गये? तीन-चार बरस की उमर में पहले किसी स्कूल में एकाध साल नर्सरी में। फिर किसी या उसी स्कूल में पहली से बारहवीं, यानी और बारह साल। चौदह-पंद्रह साल तो यही हो गये। अब उसमें पांच और। कुल मिलाकर उन्नीस-बीस साल लग जाते हैं। बचपन में पहने, नहीं पहने निक्कर, कमीज, जूते-चप्पल, अपनी भाषा तब सब कुछ पीछे छूट जाता है।

ये जूते-चप्पल की बात, निक्कर की बात इंजीनियर के साथ कहां से आ गयी? पानी, तालाब का कुछ काम समझने के लिए एक बार हम लोग अलवर जिले के किसी गांव में एक पाल पर खड़े थे। पाल सीधी न होकर थोड़ी आड़ी-तिरछी थी। वहीं खड़ा था एक बच्चा। नंगे पैर, शरीर पर अपनी उमर से बड़ी बस एक कमीज पहने। इसलिए आयी है जूते-चप्पल की बात। वह इंजीनियर बन रहा है। आज नहीं तो कल यह पूरा इंजीनियर बन जायेगा। कुछ भी पीछे नहीं छूटा है। ज्यादा कुछ है भी नहीं इसके पास।

बहुत से लोग बतायेंगे कि इसकी उमर तो अभी स्कूल जाने लायक ही नहीं है। स्कूल है तो पढ़ाने वाले नहीं हैं। कहीं स्कूल है पर छत नहीं है, दीवार नहीं है। कई स्कूलों में ब्लैकबोर्ड तक नहीं थे। जब इस तरह की शर्मनाक जानकारी किसी सर्वे से निकल कर आयी तो सरकार को 'ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड' जैसी योजना तक चलानी पड़ी थी।

वापस अपने इंजीनियर पर लौटें। यह अपने माता-पिता के साथ इसी उमर से तालाब बनाने के काम में जुट गया है। अभी यह तालाब सूखा दिख रहा है। एक आड़ी-तिरछी पाल पर खड़ा हमारा यह इंजीनियर हमें क्या बता रहा है? वह हमें अपने बाएं हाथ की कोहनी दिखा रहा है; क्यों? मैंने उससे पूछा था कि तुम्हारे माता-पिता ने यह पाल सीधी क्यों नहीं बनायी है? माता-पिता तब वहां थे नहीं। इसने उनकी तरफ से नहीं, अपनी तरफ से पूरे भरोसे के साथ उत्तर दिया था कि अरे आपको पता होना चाहिए कि पाल के दाहिनी तरफ एक बड़ा नाला है। वह सामने वाली पहाड़ी से उतरता है। अभी सूखा दिखता है। पर बरसात में यह नाला इतना बौखला जाता है कि पूछो मत। वह खूब सारा पानी लेकर हमारे इस तालाब में आयेगा। अगर यह पाल हमने सीधी बना दी होती तो वह इसे तोड़कर अपने साथ बहा ले जाता। इसलिए नाले के पानी की ताकत को तोड़ने के लिए हमारे पिताजी ने पाल में कोहनी दी है।

भरने के बाद में इस तालाब पर दुबारा तो नहीं जा पाया, पर वहां से खबर लगती रही। हर साल वह तालाब पूरा भरता रहा। कभी टूटा नहीं यानी हमारे छोटे इंजीनियर की कोहनी बड़े काम आती रही है।

अंग्रेज जब यहां आये हैं तब हमारे यहां सिविल इंजीनियरिंग की पढ़ाई सिखाने वाला कोई भी कॉलेज नहीं था। कुछ दूसरे तरह के विषय सिखाने वाले कॉलेज भी नहीं थे। इंजीनियरिंग की पढ़ाई नहीं थी, इंजीनियर नहीं थे। लेकिन इंजीनियरिंग का काम सब जगह होता था। पहला ऐसा कॉलेज हरिद्वार के पास रूढ़की नाम के एक छोटे-से गांव में खुला था। सन् 1947 में। वह भी इसलिए कि इस गांव के लोगों ने तब ईस्ट इंडिया कंपनी की ओर से अकाल से निपटने के लिए कोई 200 किलोमीटर लंबी एक शानदार नहर बनायी थी। उस जमाने में कहीं भी बिजली नहीं थी। इसलिए चूना-पत्थर को बारीक पीसकर बनायी जाने वाली सीमेंट भी नहीं थी। यह नहर बहुत लंबी-चौड़ी तो थी ही, इसे एक बड़ी नदी को भी पार करना था। तब अंग्रेज अधिकारियों को लगा था कि बस इसी बात पर नहर बनाने का काम ठप्प हो जायेगा। पर रुढ़की के गांव वालों ने, अनपढ़ माने गये इंजीनियरों ने, इसे न सिर्फ पूरा कर दिखाया, बल्कि ऐसा किया कि आज कोई 200 साल बाद भी सोनाली नदी के ऊपर से निकली यह नहर टूटकर गिरी नहीं है। आज भी यह ठाठ से बहती है और अनगिनत खेतों की सिंचाई करती है।

इस नहर को जिन अनेक गुमनाम और अनपढ़ माने गये लोगों ने बनाया था, उन्हीं के कारण फिर हमारे देश का पहला इंजीनियरिंग कॉलेज सन् 1847 में इसी छोटे-से गांव रूढ़की में खोला गया था।→

मत-सम्मत

सादगी राजनेताओं की?

❑ किशनगिरि गोस्वामी

क्या राजनेताओं की सादगी एक पाखंड है? या वह अर्थव्यवस्था को मंदी से निकालने में लगी राजनीति का हिस्सा है? या वह ज्यादा सुख-सुविधा में डूब चुके राजनीतिक दलों को अनुशासित और सक्रिय बनाने तथा उसे नैतिक बल प्रदान कर जनता के करीब लाने का प्रयास है? या फिर सादगी, उस ब्राह्मणवादी समाजवाद की रणनीति है, जो जातिगत एवं आर्थिक असमानता बरकरार रखते हुए, उसे मिटाने का भ्रम पैदा करती है? या वह खबरों से खाली मीडिया के बक्से में रंग पैदा करने का एक मसाला है?

सामान्य जन के अनुसार—सादगी की बात बड़े-बड़े नेताओं के 'आत्म विज्ञापन' के सिवाय कुछ भी नहीं है। क्योंकि प्रदर्शन करते ही सादगी की हत्या हो जाती है! स्वाधीनता आंदोलन के दौरान किसी भी नेता ने सादगी का कोई प्रदर्शन नहीं किया था, उन्हें इसकी आवश्यकता भी नहीं थी। वास्तव में यह दुनिया सीमित संसाधनों वाली प्रकृति की एक इकाई है। यहां कुछ भी असीमित, अंतहीन और अक्षय नहीं है। हम जरा गहराई में उतरेंगे, तो पायेंगे कि मनुष्य के लिए जीने के जितने भी संसाधन हैं, उन्हें मनुष्य न तो बना सकता है, न बढ़ा सकता है और न ही बदल सकता है। हम चाहें तो उसकी मर्यादा भंग कर सकते हैं, और यही हम करते भी जा रहे हैं। लेकिन उसकी कीमत भी हमें ही चुकानी पड़ रही है।

भारत के राजनेताओं ने विकास के नाम पर उन्हीं सुविधाओं को पाना चाहा और उन्हीं तौर-तरीकों को अपनाना चाहा, जो पश्चिमी देशों के सम्पन्न वर्ग को उपलब्ध थे। अपनी इस चाहत को उन्होंने देश की चाहत बना दिया। नीति निर्धारण, नियोजन, प्रशासन एवं धन अर्जन में इनका भी वर्चस्व था और बना रहा। ये लोग देश के स्वयंभू प्रवक्ता बन गये और देश को एक उपनिवेश की तरह चलाने लगे। पहले भारत की सम्पदा से अंग्रेज फलते-फूलते थे, आजादी के बाद ये राजनेता फलने-फूलने लगे। देश के परम्परागत समुदाय एवं प्राकृतिक संसाधन इनके शोषण एवं दोहन के शिकार होते चले गये।

दरअसल भारत में विकास भी राजनेताओं का नारा (जुमला) है, जिसका भजन बनाकर ये गाते रहते हैं। जिस मुल्क में करोड़ों लोग भूखे-नंगे हों, उस मुल्क के प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति बड़े-बड़े बंगलों में रहें, इससे बढ़कर बेईमानी और क्या हो सकती है? इससे बढ़कर फिजूलखर्ची और क्या हो सकती है कि प्रधानमंत्री को हवाई अड्डे तक पहुंचने में कोई कठिनाई नहीं हो, इसके लिए 200 करोड़ रुपये की सुरंग बना ली जाय? यह देश पाखंड में आकंठ डूबा हुआ है। एक लोकतांत्रिक देश में वहां का प्रधानमंत्री सोने के तारों द्वारा स्वनामांकित 10 लाख रुपये का सूट पहनकर राष्ट्रीय पर्व पर अरबों गरीब जनता के समक्ष उनको सम्बोधित करता हुआ दिखाई पड़ा। मानो आपनी गरीब जनता का मजाक उड़ाता हुआ...उनके मुंह पर थप्पड़ मारता हुआ प्रतीत हुआ कि हम तो शान-शौकत से रहेंगे, भले ही तुम भूखे-प्यासे, नंगे, कुचले रहो। एक ने 10 लाख रुपये का सूट मात्र एक बार पहनकर उसे नीलामी की आज्ञा देकर स्वयं को 'निर्मोही' साबित कर दिया, तो दूसरे ने इसे 4.4 करोड़ रुपये में खरीदकर आम जन को अपने पैसे की चमक दिखा दी।

भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित शाह अपने सांसदों/विधायकों को पत्र लिखकर रसोई गैस सब्सिडी छोड़ने की अपील कर रहे हैं, यह जताने के लिए की उनकी पार्टी को आम आदमी की कितनी चिन्ता है। तो एकाध सिलेण्डर के 'त्याग' से काम चलने वाला नहीं है, जीवन के हर क्षेत्र में ऐसा करना चाहिए। जहां लोगों से मात्र 20 रुपये में एक दिन का खर्च चलाने की आशा की जाती है, वहां सांसदों का नाश्ता ही लाखों रुपये में एवं पार्टियों में एक प्लेट हजारों रुपये की क्यों होती है? संसद की कैंटीन में नाममात्र की कीमत (28 रुपये) में जायकेदार थाली मिल जाती है, जबकि बाजार में सस्ते से सस्ते ढाबे पर भी एक प्लेट दाल या सब्जी के कम से कम 50 रुपये लगते हैं। कैंटीन पर हर साल खर्च होने वाली करोड़ों रुपये की सब्सिडी का भार आखिर आम जनता पर ही पड़ता है। क्या उन्हें आगे आकर यह नहीं कहना चाहिए कि वे गरीब जनता के पैसे पर सस्ता खाना खायेंगे। अमित शाह क्या अपनी सरकार में बैठे मंत्रियों को रसोई गैस सब्सिडी को छोड़ने की तरह लुटियन्स के आलीशान बंगले छोड़ने के लिए राजी कर सकते हैं? इन बंगलों की कीमत 400-500 करोड़ से ऊपर है। क्या वे हर मंत्री की हाजरी में रहने वाले कारों के काफिले को कम कर सकते हैं? अगर नहीं, तब कुछ सिलेण्डर छोड़कर सस्ती वाहवाही पाने से क्या होगा।

देश आकंठ कर्ज में डूबा है। हर पैदा होने वाले बालक पर हजारों रुपये का कर्ज है,

---

→तब यह हमारे देश का ही नहीं, एशिया का भी पहला ऐसा कॉलेज था। अमेरिका में भी कोई नहीं था ऐसा कॉलेज। चीन, जापान, आज के कोरिया आदि देशों में भी नहीं। खुद इंग्लैंड में इस दर्जे का कोई कॉलेज नहीं था। इस कॉलेज का इतिहास बताता है कि एक बार इंग्लैंड से भी छात्रों का एक दल रूढ़की के इस कॉलेज में पढ़ने के लिए आया था। तो इस कोहनी की कहानी हमें क्या बताती है? पढ़ना-लिखना अच्छी बात है, पर सीखना हो तो जरूरी नहीं कि स्कूल ही जाना होगा। एक कदंब का पेड़ यदि यमुना तीरे मिल जाये तो उस पर बैठ कर दो पैसे वाली बांसुरी बजाते-बजाते कन्हैया तक बना जा सकता है। इंजीनियर तो मामूली-सी बात है न! ❑

ऐसे में प्रयास होने चाहिए कि यहां अधिकाधिक लोगों को काम पर लगाया जाय। देशी उद्योग-धंधों को बढ़ावा दिया जाय। डूबती हुई फैक्ट्रियों को सक्षम बनाने का काम किया जाय। कर्ज में डूबा देश आर्थिक गुलाम होता है और यह देश तो कारपोरेट्स के हाथों बिक चुका है। ऐसे में हमारे देश के नेता 'मेक इन इंडिया' का नारा देकर देश को आखिर कहां ले जाना चाहते हैं? नव उदारवाद और साम्राज्यवादी संस्कृति जिस विज्ञापनी मानसिकता को बढ़ावा देती है, वस्तुतः सबको पीछे छोड़कर खुद आगे बढ़ने की मनोवृत्ति पर आधारित है। भारतीय चिन्तन (दर्शन) में इसे अहंकार कहा जाता है। अहंकार हमेशा खुद को शेष से पृथक् करता है, जबकि सादगी तो सबकी तरह रहने और सबमें स्वयं को समा देने की वृत्ति है। आज तो इस देश के भीतर भी न जाने और कितने देश बन गये हैं। इन्हें एक देश का नागरिक सादगी से ही बनाया जा सकता है...लेकिन वह गांधीजी की सादगी से...हवाई यात्रा की सादगी से नहीं। हवाई यात्रा में सादगी का स्वांग?...जहां राज्यों तथा राष्ट्र की राजधानियों तक में 70 साल के वृद्ध रिक्शा खींचते हैं...वहां हवाई यात्रा में सादगी बरतने की लीला?...और यह भ्रम की जनता इस स्वांग को नहीं समझ रही है।

हमारे राजनेता सादगी की बहुत तारीफ करते हैं, लेकिन सादगी की प्रशंसा नहीं, उसे पसंद करना होता है। सादगी की प्रशंसा करना एक बात है, और उसे पसंद करना दूसरी बात। सादगी की प्रशंसा तो सरल है, लेकिन उसे पसंद करना, जीवन-आचरण में उतारना काफी कठिन है। पसंद करने का अर्थ है—राम ने जो किया वह हमें करना है। जो महावीर ने जिया, वह हमें जीना है। प्रशंसा में तो मात्र दो तोले की जुबान हिलानी पड़ती है, लेकिन पसंद करने पर अपना तन-मन सब कुछ हिलाना पड़ता है। हमारे राजनेताओं को यह समझना चाहिए कि जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन आदर्शों के अनुरूप जीने से आते हैं, मात्र प्रदर्शन करने से नहीं। ❑

स्मृति-शेष

प्रेरक व्यक्तित्व के धनी डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम

❑ डॉ. जगदीश गांधी

''आने वाली पीढ़ी हमें तभी याद रखेगी जबकि हम अपनी युवा पीढ़ी को एक समृद्ध और सुरक्षित भारत दे सकें, जो कि सांस्कृतिक विरासत के साथ-साथ आर्थिक समृद्धि के परिणामस्वरूप प्राप्त हो।'' –डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम

भारत के सबसे ज्यादा लोकप्रिय ग्यारहवें राष्ट्रपति डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम का पूरा नाम अवुल पाकिर जैनुलाब्दीन अब्दुल कलाम था। डॉ. कलाम का जन्म 15 अक्टूबर, 1931 को हुआ था। वे पहले गैर-राजनीतिज्ञ राष्ट्रपति थे। आपकी लोकप्रियता सरल, उत्साही और प्रेरक व्यक्तित्व की वजह से थी। आपके पिता अपनी नावें मछुआरों को देकर अपने परिवार का खर्च चलाते थे। अपनी आरम्भिक शिक्षा पूरी करने के लिए कलामजी को घर-घर अखबार वितरण का भी काम करना पड़ा। कलामजी ने अपने पिता से ईमानदारी व आत्मानुशासन की विरासत पायी और माता से ईश्वर-विश्वास तथा करुणा का उपहार। वे भारत को अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में दुनिया का सिरमौर राष्ट्र के रूप में देखना चाहते थे और इसके लिए उन्होंने अपने जीवन में अनेक उपलब्धियों को भारत के नाम किया। कलाम साहब साहित्य में रुचि रखते थे, कविताएं लिखते थे, वीणा बजाते थे और अध्यात्म से जुड़े थे।

एक गरीब परिवार से होने के बावजूद अपनी मेहनत और समर्पण के बल पर बड़े-से-बड़े सपनों को साकार करने का एक जीता-जागता उदाहरण है पूर्व राष्ट्रपति डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम का जीवन। आपकी बातें नई दिशा दिखाने वाली हैं। आपने करोड़ों आंखों को बड़े सपने देखना सिखाया। वे कहते थे, ''इससे पहले कि सपने सच हों, आपको सपने देखने होंगे।'' इसके साथ ही उनका यह भी कहना था कि ''सपने वह नहीं जो आप नींद में देखते हैं, यह तो एक ऐसी चीज है, जो आपको नींद ही नहीं आने देती।'' आपका मानना था कि छोटी सोच सही नहीं है। जितना मुमकिन हो, उतने ख्वाब देखिये। आपका तरक्की का ख्वाब शहरों से नहीं बल्कि गांव की पंचायतों से शुरू होता था।

अपने प्रेरक विचारों के कारण डॉ. कलाम बच्चों और युवाओं के बीच अत्यधिक लोकप्रिय रहे। आपका मानना था कि आने वाली पीढ़ी हमें तभी याद रखेगी जबकि हम अपनी युवा पीढ़ी को एक समृद्ध और सुरक्षित भारत दे सकें, जो कि सांस्कृतिक विरासत के साथ-साथ आर्थिक समृद्धि के परिणामस्वरूप प्राप्त हो। उनका मानना था कि हम जैसा समाज चाहते हैं, हमें वैसी ही शिक्षा अपने बच्चों को देनी चाहिए। इसके लिए वे कहते थे कि चूंकि एक शिक्षक का जीवन कई दीपों को प्रज्ज्वलित करता है, इसलिए एक शिक्षक को अपने पेशे के प्रति प्रतिबद्धता होनी चाहिए। उसे शिक्षण एवं बच्चों से प्रेम होना

चाहिए।...उसे न सिर्फ विषय की सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक बातें पढ़ानी चाहिए, बल्कि छात्रों में अपनी महान सभ्यता की विरासत एवं सामाजिक मूल्यों की जमीन भी तैयार करनी चाहिए। वे इस बात पर विश्वास करते थे कि एक तेजस्वी मस्तिष्क इस धरती पर, धरती के नीचे या ऊपर, सबसे सशक्त संसाधन है। इसलिए हमारे शिक्षकों को युवा मस्तिष्कों को तेजस्वी बनाना चाहिए। शिक्षा के संबंध में उनका मानना था कि वास्तविक शिक्षा मानवीय गरिमा और व्यक्ति के स्वाभिमान में वृद्धि करती है।

कलामजी का मानना था कि बच्चों को बचपन में दी गयी शिक्षा ही उसके सारे जीवन का आधार बन जाती है। इसके लिए वे अपना उदाहरण देते हुए बताते थे कि वे बचपन से ही अपने गुरु अय्यरजी से अत्यधिक प्रभावित थे। कक्षा 5 में पढ़ते हुए उनके गुरु श्री अय्यरजी ने उनकी कक्षा के सभी बच्चों को कक्षा में पढ़ाने के साथ ही 'पक्षियों को उड़ने की क्रिया' शाम को समुद्र तट पर बुलाकर पक्षियों को उड़ते हुए दिखाया था। इसका कलामजी के जीवन में बहुत ही गहरा प्रभाव पड़ा और आने वाले समय में एक रॉकेट इंजीनियर, एयरोस्पेस इंजीनियर तथा प्रौद्योगिकीवेत्ता के रूप में उनका जीवन रूपांतरित हो गया। कलामजी का कहना था कि ''सात साल के लिए कोई बच्चा मेरी निगरानी में रह जाये, फिर कोई भी उसे बदल नहीं सकता।''

भगवान में उनकी गहरी आस्था थी। कोई तो है जो ब्रह्मांड चला रहा है। इतना बड़ा ब्रह्मांड, धरती के करोड़ों जीव-जंतु क्या ऐसे ही पनप रहे हैं? कोई शक्ति है, जिसके कारण ब्रह्मांड में सब कुछ इतना सुनियोजित है। हम उस शक्ति को कोई भी नाम दे सकते हैं। वे जहां एक ओर कुरान पढ़ते थे तो वहीं दूसरी ओर गीता भी पढ़ते थे। उनका मानना था कि भगवान, हमारे निर्माता ने हमारे मस्तिष्क और व्यक्तित्व में असीमित शक्तियां और क्षमताएं दी हैं और उसकी प्रार्थना हमें इन शक्तियों को विकसित करने में मदद करती है। वे कहते थे कि आकाश की तरफ देखिये, हम अकेले नहीं हैं। सारा ब्रह्मांड हमारे लिए अनुकूल है और जो सपने देखते हैं और मेहनत करते हैं उन्हें प्रतिफल देने के लिए सारा ब्रह्मांड मदद करता है।

आपका मानना था कि शिक्षण का मुख्य उद्देश्य छात्रों में राष्ट्र-निर्माण की क्षमताएं पैदा करना है। ये क्षमताएं शिक्षण संस्थानों के ध्येय से प्राप्त होती है तथा शिक्षकों के अनुभव से सुदृढ़ होती है, ताकि शिक्षण संस्थान से निकलने के बाद छात्रों में नेतृत्वकारी विशिष्टताएं आ जायें। कलामजी कहते थे कि अगर किसी भी देश को 'भ्रष्टाचार-मुक्त' और 'सुंदर-मन' वाले लोगों का देश बनाना है तो, मेरा दृढ़तापूर्वक मानना है कि समाज के तीन प्रमुख सदस्य माता, पिता और शिक्षक ही ये कर सकते हैं।

डॉ. कलाम जानते थे कि किसी व्यक्ति या राष्ट्र के समर्थ भविष्य के निर्माण में शिक्षा की क्या भूमिका हो सकती है। उन्होंने हमेशा देश को प्रगति के पथ पर आगे ले जाने की बात कही। उनके पास भविष्य का एक स्पष्ट खाका था, जिसे उन्होंने अपनी पुस्तक 'इंडिया 2020 : ए विजन फॉर द न्यू मिलिनियम' में प्रस्तुत किया। इंडिया 2020 पुस्तक में उन्होंने लिखा कि भारत को वर्ष 2020 तक एक विकसित देश और नॉलेज सुपरपॉवर बनाना होगा। उनका कहना था कि देश की तरक्की में मीडिया को गंभीर भूमिका निभाने की जरूरत है। नकारात्मक खबरें किसी को कुछ नहीं दे सकतीं लेकिन सकारात्मक और विकास से जुड़ी खबरें उम्मीदें जगाती हैं।

लगभग 40 विश्वविद्यालयों द्वारा मानद डॉक्टरेट की उपाधि, पद्मभूषण और पद्मविभूषण तथा भारत के सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'भारत रत्न' से सम्मानित होने वाले पूर्व राष्ट्रपति डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम बाल एवं युवा पीढ़ी के प्रेरणास्रोत थे। डॉ. कलाम की पूरी जिन्दगी शिक्षा को समर्पित थी। बच्चों से रू-ब-रू होना, स्कूल, कॉलेज और यूनिवर्सिटी में जाना व छात्र-छात्राओं से प्रेरणादायक बातें करना, डॉ. कलाम को बेहद पसंद था। उनका पूरा जीवन अनुभव और ज्ञान का निचोड़ था। डॉ. कलाम का कहना था कि अनजानी राह पर चलना ही साहस है। जब दिल में सच्चाई होती, तब चरित्र में सुंदरता आती है। चरित्र में सुंदरता से घर में एकता आती है। घर में एकता से देश में व्यवस्था का राज होता है। देश की व्यवस्था से विश्व में शांति आती है। उन्होंने भारत को अंतरिक्ष में पहुंचाने में अहम योगदान दिया था। डॉ. कलाम एक प्रख्यात वैज्ञानिक, प्रशासक, शिक्षाविद् और लेखक के तौर पर हमेशा याद किये जायेंगे और देश की वर्तमान एवं आने वाली कई पीढ़ियां उनके प्रेरक व्यक्ति एवं महान कार्यों से हमेशा प्रेरणा लेती रहेंगी। ऐसे प्रेरणास्रोत डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम साहब ने 27 जुलाई, 2015 को जीवन की अंतिम सांस ली।

इस महान कर्मयोगी के प्रति हम अपनी हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। ❑

छपते-छपते...

लवणमजी नहीं रहे

वरिष्ठ गांधीवादी, सर्वोदय इंटरनेशनल एवं भारत नास्तिक संघ के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री लवणम का 14 अगस्त, 2015 को नास्तिक केन्द्र, विजयवाड़ा (आंध्र प्रदेश) में निधन हो गया। आप 85 वर्ष के थे।

आपके निधन पर सर्व सेवा संघ (अ.भा. सर्वोदय मंडल) के अध्यक्ष श्री महादेव विद्रोही ने शोक प्रकट करते हुए कहा कि सर्वोदय आंदोलन ने अपना एक वरिष्ठ मार्गदर्शक खो दिया है। लवणमजी की रिक्तता भर पाना मुश्किल है।

लवणमजी के निधन पर सर्व सेवा संघ प्रकाशन, परिसर एवं सर्वोदय जगत, वाराणसी ने अपनी गहरी संवेदना व्यक्त करते हुए अपनी विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करता है। **–स.ज. प्रतिनिधि**

स्वास्थ्य

असली नमक : सेंधा नमक

❑ वैद्य विनायकराव मोरे

आयोडीन तो उड़नशील पदार्थ है, जो झट-से हवा में घुल जाता है, फिर ऐसे इश्तिहारों के द्वारा लोगों को गुमराह कर उनके स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ क्यों किया जाता है?

मैं समझता हूं कि यह नमक अत्यन्त नुकसानदायक है। समुद्र में से प्राप्त इस नमक को 'समुद्री लवण' या 'समुद्र नमक' के नाम से आयुर्वेद में पहचाना जाता है। सारे विश्व की गंदगी नदी-नालों-गटरों द्वारा समुद्र में जाकर मिलती है। रात-दिन चलने वाले बड़े-बड़े कल-कारखानों, मिलों व कैमिकल इंडस्ट्रीज में से निकलने वाला गंदा पानी, कूड़ा-कचरा तथा समस्त वैश्विक नदियों का दूषित जल भी समुद्र में जाकर मिलता है।

भगवान सूर्यनारायण की गति और गर्मी से पूर्णमासी और अमावस के दिन होने वाले ज्वारभाटे से समुद्र का पानी समुद्र तट पर तैयार किये अगरों (नमक के खेतों) में एकत्र किया जाता है। यह सूर्य की गर्मी से सूखकर पाउडर बन जाता है। यह द्रव्य ही समुद्र लवण है। नमक के व्यापार से जुड़े हुए उद्योगपति इसमें उनके तरीकों से आयोडीन मिलाकर शुद्ध करके बाजार में रखते हैं और उनका ही नमक सर्वश्रेष्ठ एवं आरोग्यकारक है। ऐसा जबरन लोगों के दिमाग में टी. वी., रेडियो, न्यूज पेपर आदि विज्ञापन माध्यमों से ठूंसने का ठोस प्रयास करके दिन-दहाड़े लोगों के स्वास्थ्य से खिलवाड़ करते हैं।

मेरी दृष्टि से मैं स्पष्ट मानता हूं कि यह समुद्र नमक आज की परिस्थिति में आरोग्यदायक नहीं है। पहले के जमाने में यानी कि भूतकाल में इतनी सारी गंदगी समुद्र में नहीं छोड़ी जाती थी। इतने सारे उद्योग ही नहीं थे। तो भले ही उस जमाने में समुद्र लवण का उपयोग होता था। किन्तु आज के हालात में जब सारा विश्व जानलेवा बीमारियों से घिरा हुआ है, तब यह नमक हमेशा के लिए छोड़ देना चाहिए। यह मेरा अपना निजी अभिप्राय है।

नमक के बिना रसोई का स्वाद आता ही नहीं। भोजन में लवण अनिवार्य है, तो फिर कौन-सा नमक हमेशा के लिए प्रयोग करना चाहिए; जो स्वास्थ्यप्रद भी हो और हानिकारक भी न हो तथा जिसमें समुद्री लवण जैसी गंदगी न हो। मेरे विचार से सेंधा या सैन्धव नमक ही इसके लिए सर्वश्रेष्ठ है।

सैन्धव नमक में समुद्र के नमक जैसी गंदगी बिल्कुल नहीं होती। केवल वनस्पति, पेड़-पौधों के पत्तों का कचरा ही ज्यादा होता है और उस पर चन्द्रमा का प्रकाश पड़ते रहने की वजह से शीतल, ठंडा, शीतवीर्य है। इसकी उत्पत्ति राजस्थान, पंजाब आदि राज्यों में पत्थर की खदानों से है। विभाजन के पहले यह सिंध प्रांत से ज्यादा मिलता था। अब सिंध प्रदेश पाकिस्तान में है। यह सिंध से प्राप्त होता था, इसीलिए इसको सैन्धव नमक के नाम से जाना जाता है। एकादशी, पूर्णमासी, शिवरात्रि आदि पवित्र उपवास के दिनों में तथा भगवान के नैवेद्य के भोग में सैन्धव का ही उपयोग होता है। इसलिए इसको उपवासी नमक या फरहारी नमक भी कहते हैं।

समुद्री लवण से रक्त का पानी बनना, उच्च रक्तचाप (हाई बीपी), आंखों की रोशनी कम होना, हड्डियों का घिस जाना, गुर्दे (किडनी) बिगड़ना, आंतों में अल्सर होना आदि कई बीमारियां होती हैं।

जबकि सैन्धव या सेंधा नमक मधुर, स्निग्ध, पाचक, अग्नि को प्रदीप्त करने वाला, भूख लगाने वाला, अन्न को पचाने वाला, रुचिकर, शीतवीर्य, सुखकारक, वात-पित्त एवं कफ की विकृतियां दूर करने वाला, सम्भोग शक्ति बढ़ाने वाला तथा आंखों के लिए हितकारी है।

निघण्टु रत्नाकर ग्रंथ में बताया है कि—

सैधवं रुचिदं वृष्यं चक्षुष्यं चाग्निदीपनम्।
शुद्धं स्वादुलघुस्निग्धं पाचनं शीतलं अथः।।
अविदाहितु सूक्ष्मश्च हृद्यं चैव त्रिदोषहम्।
व्रणदोषमलस्तम्भं हृद्रोगं चैव नाशयेत्।।

ऐसे ही भावप्रकाश में भी भावमिश्रजी ने कहा है कि—

सैन्धवं लवणं स्वादु दीपनं पाचनं लघु।
स्निग्धं रुच्यं हिमं वृष्यं सूक्ष्मं नेत्र्यं त्रिदोषहृत्।।

यानी कि सैन्धव नमक मधुर, रुचिकर, जीवनी-शक्ति को बढ़ाने वाला, दीपन, पाचन, शुद्ध, स्वादिष्ट, स्निग्ध, शीतवीर्य और पचने में हल्का है। वात, पित्त, कफ की विकृति को दूर करने वाला, विदाही, सूक्ष्म, हृदय के लिए हितकारी, घाव को भरने वाला (व्रण रोपण), मलावरोध तथा हृदय रोग को नष्ट करने वाला है। वृक्क यानी किडनी के रोगों में भी इसका उपयोग हो सकता है।

इतनी सारी सैन्धव (सेंधा नमक) की विशेषताएं, गुण-दोष, उपयोग जानने के बाद आप क्या सोचते हैं? फेंक दें आज का आयोडाइज नमक और लाओ, अपनाओ सेंधा नमक, जो आपका, आपके कुटुम्ब का स्वास्थ्य सौ प्रतिशत रक्षण करेगा।

मैं अपने घर में पिछले पचीस साल से सेंधा नमक ही इस्तेमाल करता हूं और मेरे चिकित्सार्थ आने वाले सैकड़ों रुग्णों को हमेशा के लिए समुद्र लवण छुड़वाकर मैंने सैन्धव नमक उपयोग करना सिखा दिया है। सीनियर सिटीजन बुजुर्गों को इसके विषय में गंभीरता से सोचकर इसका उपयोग और प्रचार-प्रसार करना चाहिए, क्योंकि 70 वर्ष से ऊपर की उम्र वाले सामान्य तथा उच्च रक्तचाप के 80 प्रतिशत मरीज होते हैं, इसमें 10 प्रतिशत लोगों की तो हार्ट सर्जरी, एन्ज़ियो-प्लास्टी भी हुई होती है।

इसके अतिरिक्त कमर में दर्द (Lumbar Spondylitis), घुटनों में दर्द, गर्दन में दर्द (Cervical Pain), अपचन, पेट में गैस, बद्धकोष्ठ, आंखों की कमजोरी आदि व्याधियों से पीड़ित होते हैं। इन सभी के लिए सेंधा नमक ही श्रेष्ठ है। हमारे शरीर में नाभि के बांयीं ओर पेट में तिल जितनी अग्नि होती है, जिसे जठराग्नि या पाचकाग्नि कहते हैं। यही अग्नि भगवान का साक्षात् स्वरूप है। भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में स्वमुख से कहा है कि—

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः।
प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम्।।

अर्थात् मैं प्राणियों की देह में रहकर वैश्वानर अग्नि का रूप लेकर प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान वायु को नियम में रखकर चार प्रकार का अन्न (चूसा हुआ, चाटा हुआ, चबाया हुआ और पीया हुआ) पचाता हूं।

तो फिर अब हमें क्या करना है? हमें प्रतिज्ञा करनी है—शरीरस्थ भगवान की आराधना करते हुए सेंधा नमक ही अपनाकर शरीर-मन-बुद्धि को स्वस्थ रखने की। ❑

46वां सर्वोदय समाज सम्मेलन : पृष्ठभूमि

देश के आजाद होने से बहुत पहले ही महात्मा गांधी को यह आभास था कि आजाद भारत में उनके द्वारा प्रस्तावित तथा रचनात्मक कार्यकर्ताओं द्वारा प्रतिपादित विकास की अवधारणा का पालन होना मुश्किल होगा। इसलिए वे अपने विश्वसनीय साथी-सहयोगियों से सलाह करना चाहते थे कि सर्वोदय की आदर्श कल्पना के अनुरूप भारत के पुनर्निर्माण के लिए कौन-सी कार्यविधि अपनायी जाय, जिसमें समाज के अंतिम व्यक्ति के विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता मिले। लेकिन नियति को कुछ और ही मंजूर था और इस प्रकार के विचार-मंथन से पहले ही 30 जनवरी, 1948 को उनकी हत्या हो गयी।

गांधीजी की अनुपस्थिति में देश के गांधीजनों ने 13 से 15 मार्च, 1948 को सेवाग्राम आश्रम में एक विशाल चिन्तन सम्मेलन आयोजित किया, जिसमें बड़ी संख्या में रचनात्मक कार्यकर्ताओं के अलावा डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, पं. जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभभाई पटेल, आचार्य विनोबा भावे, लोकनायक जयप्रकाश नारायण, जे. बी. कृपलानी जैसे राष्ट्रीय नेताओं ने भी भाग लिया।

इस सम्मेलन में सर्वसम्मति से यह निर्णय लिया गया कि गांधीजी द्वारा नयी जीवन-पद्धति के रूप में परिभाषित 'सर्वोदय-विचार' देश के लिए दिशासूचक होगा तथा रचनात्मक कार्यकर्ता और सरकार संयुक्त रूप से सर्वोदय दर्शन पर आधारित समाज के निर्माण के लिए कार्य करेंगे।

गांधीजी की भावना और अंतिम इच्छा को ध्यान में रखते हुए विभिन्न गतिविधियों में संलग्न गांधी विचार वाली संस्थाओं का एक परिसंघ गठित करने का भी निर्णय लिया गया, ताकि अपेक्षित अहिंसक समाज की रचना में उनका सहयोग मिल सके। तदनुसार सर्वोदय विचार में आस्था रखने वाले व्यक्तियों और संगठनों को लेकर एक समन्वित संगठन 'अखिल भारत सर्व सेवा संघ—अखिल भारत सर्वोदय मंडल' का गठन किया गया। इसमें रचनात्मक कार्यों में संलग्न व्यक्तियों और संगठनों का एक संयुक्त एवं सुगठित भाईचारा स्थापित करने का विचार निहित था। यह सोचा गया कि ऐसे संगठित समुदाय के द्वारा ही अहिंसक क्रांति के लिए आवश्यक शक्ति पैदा की जा सकती है।

चूंकि संगठित शक्ति, चाहे वह अहिंसक शक्ति ही क्यों न हो, रचनात्मक होने के साथ ही विध्वंसक होने की भी सम्भावना रहती है, इसलिए संगठित शक्ति को नकारात्मक तथा विध्वंसक होने से रोकने के प्रश्न पर भी सेवाग्राम सम्मेलन में चिन्तन और विचार किया गया और इस प्रकार 'सर्वोदय समाज' की अवधारणा बनी। इसकी एक ऐसे मंच के रूप में कल्पना की गयी, जहां 'सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह, सर्वोदय, स्वदेशी और सर्वधर्म समभाव' जैसे मूल्यों के प्रति समर्पित कार्यकर्ता मिलकर एक मुक्त वातावरण में विचार-विमर्श कर संयुक्त रूप से कार्य करने की योजना बना सके।

'सर्वोदय समाज' का विचार इस रूप में व्यापक है कि महात्मा गांधी द्वारा कल्पित एक ऐसे सर्वोदय समाज की ओर संकेत करता है, जिसमें भिन्नता में एकता, सभी धर्म-सम्प्रदाय के लोगों के आपसी सद्भाव तथा सबके लिए, विशेषकर समाज के अंतिम व्यक्ति को न्याय मिलेगा। यह आपसी स्नेह तथा विश्वास पर आधारित एक ऐसा समाज होगा, जिसपर सभी को गर्व होगा।

इस प्रकार सर्वोदय समाज पारम्परिक रूप में एक संस्था या संगठन मात्र नहीं है। इसे सांगठनिक ढांचे की संकुचित अवधारणा से मुक्त, एक ऐसे संगठन के रूप में देखा जाना चाहिए, जो कि किसी भी प्रकार की पूर्व निर्धारित तकनीकी से बँधा हुआ नहीं है। यह उभरती हुई आवश्यकताओं और चुनौतियों से मुकाबला करने के लिए मूल सिद्धांतों को बदले बिना उपयुक्त कार्य-प्रणाली विकसित करेगा।

–आदित्य पटनायक, संयोजक

सर्वोदय समाज सम्मेलन : 2015
सादर आमंत्रण

इस वर्ष '46वां अखिल भारत सर्वोदय समाज सम्मेलन' *1 से 3 नवंबर, 2015 को हरिजन सेवक संघ, गांधी आश्रम परिसर, किंग्सवे कैम्प, नयी दिल्ली-110009* में आयोजित किया जा रहा है। महात्मा गांधी द्वारा स्थापित यह आश्रम उन्हीं की गरिमा से प्रदीप्त है। बापू जब दिल्ली में होते थे, विशेष रूप से विभाजन पूर्व के त्रासद काल में, यहीं रुकते थे। हमारे लिए यह भी महत्त्वपूर्ण है कि यह सार्वोदय समाज सम्मेलन पहली बार देश की राजधानी में होने जा रहा है। हम उम्मीद करते हैं कि इस सम्मेलन में देश ही नहीं बल्कि दुनिया के अनेक भागों से गांधी प्रेमी भाग लेंगे।

आशा है, आपकी उपस्थिति इस सम्मेलन को सही अर्थों में विनोबाजी के 'जयजगत' के नारे को सार्थक करेगा। –आदित्य पटनायक, संयोजक

कविताएँ

मुझे जन्म दो, मुझे जन्म दो

❑ डॉ. अजय जनमेजय

मैं भी तो हूं अंश तुम्हारा
मैं भी तो हूं वंश तुम्हारा
पापा को समझा कर देखो
सारी बात बता कर देखो।
बिगड़ा है अनुपात बताओ
क्या होंगे हालात बताओ
फिर भी अगर न पापा माने
रोऊंगी मनुहार करूंगी
जीवनभर आभार करूंगी।
मां तेरी ही बेटी हूं मैं
मुझे जन्म दो, मुझे जन्म दो।

लक्ष्मीबाई, मदर टैरेसा
क्या कोई बन पाया वैसा
मत कहना इक ध्याय है पन्ना
ममता का अध्याय है पन्ना
ये बातें बतलाओ अम्मा
दादी को समझाओ अम्मा
मैं नन्हीं पौती, दादी के,
सब गुण अंगीकार करूंगी
जीवनभर आभार करूंगी।
मां तेरी ही बेटी हूं मैं
मुझे जन्म दो, मुझे जन्म दो।

लड़ जाऊंगी हर मौसम से
धूप अगर हो छांव बनूंगी
तेरे लिए खुशी हो जिसमें
ऐसी इक मैं ठांव बनूंगी
तेरा हर इक आंसू पोंछूं
और यही हर बार करूंगी,
जीवनभर आभार करूंगी।
मां तेरी ही बेटी हूं मैं
मुझे जन्म दो, मुझे जन्म दो।

अंतरिक्ष में जा करके मां
रोशन तेरा नाम करूंगी
जो-जो बेटे कर सकते हैं
हर वो अच्छा काम करूंगी
नाम से तेरे जानी जाऊं
ये मैं बारम्बार करूंगी
जीवनभर आभार करूंगी।
मां तेरी ही बेटी हूं मैं
मुझे जन्म दो, मुझे जन्म दो।

पापा का जो स्वप्न अधूरा
उसको पूरा कर डालूंगी
उनको दूंगी गीत खुशी के
पापा के दुःख मैं गा लूंगी
अपने प्यारे पापा का मैं
हर सपना साकार करूंगी
जीवनभर आभार करूंगी।
मां तेरी ही बेटी हूं मैं
मुझे जन्म दो, मुझे जन्म दो। ❑

यह स्वार्थी समय है

❑ सूर्य कुमार पांडेय

किस बात का है रोना,
यह स्वार्थी समय है,
इस बात का है रोना,
यह स्वार्थी समय है।

सम्बन्ध अर्थपूरित,
दर्पण मलिन हुआ है,
अर्थी को चार कंधे,
मिलना कठिन हुआ है।
पलकें नहीं भिगोना,
यह स्वार्थी समय है,
इस बात का है रोना,
यह स्वार्थी समय है।

अब मेघ भी धरा से
प्रतिदान चाहते हैं,
अब बीज भी धरा से
अनुदान चाहते हैं।
ऐसे में कुछ न बोना,
यह स्वार्थी समय है,
इस बात का है रोना,
यह स्वार्थी समय है।
पहले सियार ही थे,
अब शेर भी रँगे हैं,
विज्ञापनी मुखौटे
हर द्वार पर टंगे हैं,
ऐसे में कुछ न होना,
यह स्वार्थी समय है।
इस बात का है रोना,
यह स्वार्थी समय है। ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा सुरभि प्रिन्टर्स, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया वाराणसी से मुद्रित। संपादक : बिमल कुमार। छपी प्रतियाँ : 1450